RNI-MAHBIL/2010/33592

जैन तीर्थवंदना

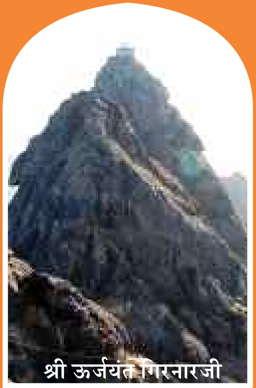

वर्ष : 12	अंक : 1	मुम्बई, अप्रैल 2022	पृष्ठ : 36	मूल्य : 25	हिन्दी
VOLUME : 12	ISSUE : 1	MUMBAI, APRIL 2022	PAGES : 36	PRICE : 25	English Monthly

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी का मुखपत्र

वीर निर्वाण संवत् 2548

श्री 1008 महावीर भगवान, पावागिरि-ऊन सिद्धक्षेत्र, मध्य प्रदेश

जैन तीर्थवंदना

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी एवं
भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र ट्रस्ट का

मुखपत्र

वर्ष 12 अंक 1 अप्रैल 2022

श्री शिखरचन्द पहाड़िया
अध्यक्ष

श्री प्रदीप जैन (पी.एन.सी.)
उपाध्यक्ष

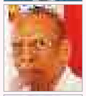
श्री वसंतलाल दोशी
उपाध्यक्ष

श्री नीलम अजमेरा
उपाध्यक्ष

श्री गजराज गंगवाल
उपाध्यक्ष

श्री तरुण काला
उपाध्यक्ष

श्री संतोष जैन (पेंढारी)
महामंत्री

श्री के.सी. जैन(काला)
कोषाध्यक्ष

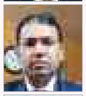
श्री खुशाल जैन (सी.ए.)
मंत्री

श्री विनोद कोयलावाले
मंत्री

श्री जयकुमार जैन (कोटावाले)
मंत्री

प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) अनुपम जैन, इन्दौर
सम्पादक
उमानाथ रामअजोर दुबे
सम्पादकीय सलाहकार
डॉ. अनेकान्त जैन, दिल्ली
श्री सुरेश जैन (IAS), भोपाल
श्री वसंतशास्त्री, चेन्नई
श्री धरमचंद शास्त्री, दिल्ली
श्री राजेन्द्र जैन 'महावीर', सनावद
डॉ. सुनील जैन 'संचय', ललितपुर
पं. (डॉ.) महावीर शास्त्री, सोलापुर
श्री प्रकाश पापड़ीवाल, औरंगाबाद

इस अंक में

भगवान महावीर के सिद्धांत अनुसार कैसे जिएं अपना जीवन ?	6
महावीर की दिव्य वाणी	8
महावीर और उनकी वाणी..... आज भी प्रासंगिक है	10
तीर्थंकर ऋषभदेव ने मानव को जीवन-मरण की कला सिखायी	12
भगवान् महावीर होने का अर्थ	14
महावीर की अहिंसा : दुनिया के लिए वरदान	16
मानव संस्कृति के आदि संस्कर्त्ता भगवान आदिनाथ	17
धर्म, संस्कृति और साधना के अन्वेषक : आचार्य श्री विद्यानंद जी महाराज	18
Jainism in Pandya Country	20
चन्दनबाला की पड़गाहन के समय स्थिति	22
परम पूज्य आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज : विशुद्ध एवं सागर सम व्यक्तित्व	24
आचार्य श्री सुनीलसागर जी कृत अध्यात्मसार का शास्त्रीय अनुचिंतन	26
णमोकार मंत्र में रंग चिकित्सा और योग विज्ञान	29
प्राचीन क्षेत्र नळदुर्ग जि. उस्मानाबाद	30
'गोपाचल' जैन तीर्थ बनाम ग्वालियर दुर्ग	33

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के सदस्य बनकर तीर्थों के संरक्षण-संवर्धन और उनके विकास में मार्ग दर्शन दीजिये

संरक्षक सदस्य	रु. 5,00,000/-	सम्माननीय सदस्य	रु. 31,000/-
परम सम्माननीय सदस्य	रु. 1,00,000/-	आजीवन सदस्य	रु. 11,000/-

नोट:
1) कोई भी फर्म, पेढ़ी, कम्पनी, धर्मादाय ट्रस्ट, संयुक्त कुटुम्ब, सोसायटी भी उपर्युक्त प्रावधान के अंतर्गत सदस्य बन सकेंगे। इस प्रकार की सदस्यता केवल 25 वर्षों के लिये होगी।
2) जो सदस्य आयकर की छूट चाहेंगे उन्हें 80जी के अंतर्गत कुछ रकम पर 80जी का लाभ मिलेगा।
3) सदस्यता से प्राप्त राशि ध्रुवफण्ड में जमा रहेगी उसके ब्याज की आय ही व्यवस्थापन एवं तीर्थक्षेत्र के संरक्षण, संवर्धन तथा उनके जीर्णोद्धार में व्यय की जायेगी।

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी को प्रेषित की जाने वाली राशि बैंक ऑफ बड़ौदा, वी. पी. रोड, मुंबई के सेविंग खाता क्र. 13100100008770, IFSC CODE BARB0VPROAD अथवा बैंक ऑफ इंडिया, सी. पी. टैंक, मुंबई के खाता क्रमांक 001210100017881, IFSC CODE BKID0000012 में किसी भी शाखा में नि:शुल्क जमा कराकर उसकी सूचना मुंबई कार्यालय को देने की कृपा करें।

पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखकों के अपने हैं. सम्पादकों का इन विचारों से सहमत होना जरूरी नहीं है।
किसी भी विवाद का निराकरण मुंबई न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में होगा

कार्यालय: भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, हीराबाग, सी.पी.टैंक, मुम्बई-400004
फोन : 022-23878293 / 022-2385 9370
website : www.tirthkshetracommittee.com, e-mail : tirthvandana4@gmail.com

मूल्य
वार्षिक : 300 रुपये
त्रिवार्षिक : 800 रुपये
आजीवन (दस वर्ष) : 2500 रुपये

अध्यक्षीय निवेदन

भारत भूमि अत्यंत पवित्र और पावन भूमि है जहाँ तीर्थंकरों, चक्रवर्तियों, बलभद्रों, नारायणों, प्रतिनारायणों, कामदेवों, रुद्रों जैसे महान पुण्यशाली जीवों का उद्गम हुआ है तथा अनंत अरिहंत भगवंतों ने शाश्वत निर्वाण पद को प्राप्त किया है। सम्पूर्ण भारत में जैनत्व का परचम सदा लहराता रहा है। उत्तर भारत में शाश्वत भूमि अयोध्या, तो पूर्व में शाश्वत भूमि सम्मेदशिखर जी, पश्चिम में गिरनार जी तो दक्षिण में सात अजूबों में एक श्रवणबेलगोला इस प्रकार जैन तीर्थ सम्पूर्ण भारत में विद्यमान है। इनके अतिरिक्त हमारे चलते फिरते तीर्थ कहे जाने वाले साधु चतुर्विद संत महात्माओं के प्रति सभी धर्म प्रेमियों की चाह होती है कि उन्हें तीर्थंकरों के कल्याणक क्षेत्रों, निर्वाण क्षेत्रों (सिद्धक्षेत्रों), अतिशय क्षेत्रों, आचार्य भगवंतों की तपोभूमियां आदि के दर्शन अवश्य हो जावें। जैन संस्कृति को जानने, पुरातत्व इतिहास, कला, शिल्प, धर्म, दर्शन आदि को समझने के रूप में जैन तीर्थक्षेत्रों का विशिष्ट योगदान है। आज जैन तीर्थ मात्र तीर्थ ही नहीं, अपितु ध्यान, प्राकृतिक, चिकित्सा, शिक्षा आदि के भी केंद्र बन गये हैं।

भारत के पूर्वी राज्य झारखण्ड में स्थित शाश्वत तीर्थ श्री सम्मेदशिखरजी की पावनता, पवित्रता एवं तीर्थ का आकर्षण सदैव तीर्थ यात्रियों को आकर्षित करती आ रही है। **भाव सहित वन्दे जो कोई, ताहि नरक पशु गति ना होई"** इस पंक्ति के प्रति प्रत्येक तीर्थयात्री की श्रद्धा है तभी तो सभी की कामना रहती है कि वह अपने जीवन में एक बार इस शाश्वत पावन तीर्थ के दर्शन कर, पुण्यार्जन कर अपनी मानव पर्याय को सफल बना ले और यात्रा करने के पश्चात् यही स्वर निकलता है कि "आज जीवन धन्य हो गया"।

तीर्थराज सम्मेदशिखरजी अपने प्राकृतिक सुरम्य वातावरण के साथ अनगिनत मंदिरों के लिए विख्यात है। बीस तीर्थंकर एवं अनंतानंत सिद्ध भगवंतों ने यहाँ से मोक्ष को प्राप्त किया है। यही कारण है कि यहाँ का कण-कण पवित्र है।

२० तीर्थंकरों की एवं अनंत अरिहंत भगवंतो की निर्वाण स्थली श्री सम्मेदशिखर जी हमारा अस्तित्व, हमारी पहचान तथा वास्तव में हम जैनियों और जैन धर्म का प्राण है। हमारे आचार्य भगवंतों ने शास्त्रों में श्री सम्मेदशिखर जी और श्री अयोध्या जी तीर्थ को शाश्वत तीर्थ बताया है। शास्त्रों के अनुसार २४ तीर्थंकरों का जन्मकल्याणक श्री अयोध्या जी में तथा निर्वाण कल्याणक श्री सम्मेदशिखर जी में ही होता है। वर्तमान काल चक्र में हुंडावसर्पिणी काल के प्रभाव से २४ तीर्थंकरों का जन्म अयोध्या जी में न होकर अन्य क्षत्रों एवं २४ तीर्थंकरों का निर्वाण शाश्वत तीर्थ सम्मेदशिखर जी से नहीं हुआ है। यह अनादिनिधन पर्वत है।

जैसा कि सबको विदित ही है कि श्री सम्मेदशिखर जी केस अदालत में लंबित है जिसके सुप्रीम कोर्ट में अंतिम निर्णय के लिए पैरवी पर आने के लिए मात्र कुछ दिन ही शेष रह गए हैं।

श्री सम्मेदशिखर जी केस में अदालत के निर्णय पर सम्पूर्ण जैन समाज की निगाहें टिकी हुई हैं। हमारे महामंत्री की ओर से गत महीनों से श्री शिखरजी केस के लिए समाज से आर्थिक सहयोग की अपील भी की जा रही है। मैं उन सभी दान दातारों के प्रति हार्दिक धन्यवाद प्रकट करता हूँ जिन्होंने अपनी चंचल धन लक्ष्मी का सदुपयोग करते हुए तीर्थक्षेत्र कमेटी को श्री शिखरजी केस में मजबूतता से अपना पक्ष रखने में सहयोग प्रदान किया है।

अनेकांतवाद से संसार की प्रत्येक समस्याओं, उलझनों का हल निकाला जा सकता है। अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर ने सम्पूर्ण मानव समाज को अनेकांत के साथ-साथ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह इन पांच महाव्रतों की शिक्षा दी है। वर्तमान में भगवान महावीर के द्वारा दी गयी शिक्षा एवं अनेकांत की आज महती आवश्यकता है। अखंड जैन धर्म को आज समाज ने खंडो-खंडो में बाँट दिया है। अनेक पंथों के कारण हम मूल पंथ को भूलते जा रहे हैं। परन्तु आज हमें पंथ को नहीं पथ को महत्ता देने की आवश्यकता है। तीर्थंकर वीतरागी भगवानों की प्रतिमायें हमें संसार बंधन से छुटकारा पाने का संकेत देती हैं पर हम अपनी विषाक्त बुद्धि से आपस में राग-द्वेष के कारण उसी प्रतिमा को पंथवाद में फसने का चक्र बना लेते हैं।

माता त्रिशला एवं राजा सिद्धार्थ के घर जन्में वर्धमान अल्प आयु में घर-बार छोड़कर मोक्ष पथ पर अग्रसर होकर अपनी ७२ वर्ष के जीवन चक्र में सम्पूर्ण मानव जीवन को धर्म की शिक्षा प्रदान करते हुए मोक्ष को प्राप्त हो गए। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके द्वारा बताये हुए पथ पर बढ़ते हुए अपने मानव जीवन को सफल बनायें।

आइये तीर्थंकर वर्धमान के जन्म कल्याणक की पावन बेला पर हम सभी संकल्पित हों - नई चेतना और स्फूर्ति के साथ श्रमण संस्कृति के संरक्षण हेतु विगत सवा सौ वर्षों से समर्पित आपकी अपनी एक मात्र संस्था भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी को तन, मन, धन से सहयोग देकर वर्धमान जिनशासन को प्रभावशील बनायें, जिससे चतुर्दिक दिशाएं जैनम जयतु शासनं के उद्घोष से गुंजायमान हों। भगवान महावीर स्वामी के जन्मकल्याणक महोत्सव की आप सभी को हार्दिक शुभकामनायें।

शिखरचन्द पहाड़िया
राष्ट्रीय अध्यक्ष

विनम्र निवेदन

तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी हमारा शाश्वत और परम पावन तीर्थ है। सांसारिक सुखों के त्याग से ऊपर उठकर हमारे आराध्य २० तीर्थंकरों की यह सिद्ध भूमि है। अनादिकाल से हमारे अरिहन्त, आचार्य, उपाध्याय एवं साधु परमेष्ठियों ने इस शांत, निराकुल तपोभूमि पर केवलज्ञान प्राप्त करके सिद्धपद को प्राप्त किया है। यह सिद्धभूमि, यह पर्वत हमारे लिए एक अनोखी निधि ही नहीं हमारी आन-बान-शान भी है। युगों-युगों से हमारे पूर्वज यहाँ आकर वंदना, पूजा-भक्ति का समर्पण अर्घ चढ़ाकर हर्षातिरेक में भावाभिभूत हो जाते हैं और कृत-कृत होने का अनुभव होता है। तीर्थराज श्रीसम्मेदशिखरजी हमारी श्रृद्धा, आस्था, भक्ति और साधना का प्रतीक है।

ऐसे परमपावन क्षेत्र का संरक्षण करना, इसका विकास करना ही हमारा सर्वोत्कृष्ट धर्म है। हमारे लिए यही रत्नत्रय है।

आज हमारे पुण्योदय की कमी के कारण यह परम वन्दनीय क्षेत्र विवाद का रूप धारण किये हुए है। जिन हाथों ने अभिषेक के कलश उठाये आज उन्हीं हाथों को तन-मन से सशक्त करते हुए साधन संकल्पित करने का समय आया है। हम सभी चाहते हैं कि सांसारिक जय-पराजय की अपेक्षा हमारा यह क्षेत्र सदा क्षमा निदान का रूप लेकर जीवंत रहे।

मान्यवर तीर्थभक्त,

गत १२५ वर्षों से भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी सम्पूर्ण दिगम्बर जैन संघ का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्षरत है।

धर्मपालन के लिए व्यवस्थापन का यह अहिंसक संघर्ष अब निर्णायक दौर में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के सम्मुख सुनवाई के लिए बोर्ड पर आया है। तीर्थरक्षा के प्रयत्नों में अभी तक समाज के करोड़ों रुपये न्यायालय में खर्च हो चुके हैं जिसमें हाईकोर्ट में अब तक हमें सफलता भी मिली है। अब आखिरी निर्णय प्राप्त करने का वक्त आ गया है। समय की मांग है कि अपनी भक्ति एवं आस्था का संरक्षण करने के लिए हम सशक्त बनें। अब सुप्रीम कोर्ट में लिस्टेड केस सफलता पूर्वक संपन्न करने में पर्याप्त राशि की आवश्यकता पड़ रही है। इस चुनौती को पार करने में धनराशि एकत्रित करना समय की मांग है।

हम आपसे विनम्रतापूर्वक निवेदन करते हैं कि हम सभी जागृत होकर उदारता का परिचय देते हुए एक जुट होकर अपने आराध्य, तीर्थ के लिए दानराशि भेजकर तीर्थरक्षा का असीम पुण्य कमायें।

कृपया आप अपनी दान राशि "भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी" के नाम से बैंक ऑफ बड़ौदा, वी.पी. रोड, शाखा मुंबई-४ के सेविंग खाता नं. 13100100008770 IFSC: BARB0VPROAD में जमा करावें तथा हमें सूचित करें ताकि आपको रसीद भेजी जा सके -

संतोष जैन (पेंढारी)
राष्ट्रीय महामंत्री
भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी

जैन तीर्थों का कण कण पूजनीय

होली के अवसर पर जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर गये जैन पत्रकार महासंघ के एक प्रतिनिधि मंडल से चर्चा करते हुए दि. जैन समाज की वरिष्ठतम साध्वी, **गणिनी प्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी** ने पत्रकारों को दायित्व बोध कराते हुए कहा कि:-

1. पत्रकारों को मुख पृष्ठ पर कभी भी अशुभ समाचार नहीं छापना चाहिए। सदैव शुभ समाचार ही देना चाहिए।
2. तीर्थंकरों की प्रभावना के समाचार एवं कार्यक्रम देते रहना चाहिए।
3. तीर्थ हमारे अचेतन हैं फिर भी पूज्य हैं। उनका कण कण पूजनीय है तीर्थों की अवहेलना नहीं होनी चाहिए। समाज की तीर्थों के प्रति भक्ति बढ़े ऐसे प्रामाणिक समाचार प्रकाशित करने चाहिए।
4. समाचारों की प्रामाणिकता पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
5. लेख भी प्रामाणिक एवं प्रभावना बढ़ाने वाले होने चाहिए। इसके साथ ही आगम के परिप्रेक्ष्य में एवं जरूरत के हिसाब से संदर्भ देकर ही छापने चाहिए इससे प्रामाणिकता आती है। आज जरूरत इस बात की है कि हम संतवाद, पंथवाद को आगे न बढ़ाये आगम की वाणी जिनवाणी को महत्व दें। पत्रकारों का समाज में महत्व विषय पर अपने विचार रखते हुए आपने कहा कि जैन पत्रकारों को यदि जैन समाज महत्व नहीं देगा तो कौन देगा? पत्रकारों द्वारा प्रकाशित समाचार, फोटो एवं लेख इतिहास बनाते हैं। अतः हमें पूरी सावधानी के साथ प्रकाशन करना चाहिए। उन्होंने उदाहरण देते हुए बताया कि चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज के जीवन के बारे में बहुत सी बातें हमने पत्र-पत्रिकाओं से संकलित की है एवं आज भी कर रहे हैं। जिन शासन की प्रभावना में पत्रकारों का बहुत बड़ा योगदान है अतः समाज को उन्हें यथेष्ट आदर एवं सम्मान देना ही चाहिए।

आपने पत्रकारों के संगठन जैन पत्रकार महासंघ के सभी सदस्यों को अपना आशीर्वाद प्रदान किया।

शोध की घटती प्रवृत्ति चिन्ताजनकः- बीसवीं शताब्दी के अनेक दशक दि. जैन समाज के लिए शोध की दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण एवं स्वर्णिम रहे। षट्खंडागम (धवला टीका सहित), कषायप्राभृत (चूर्णिसूत्र सहित), महाधवल, तिलोयपण्णत्ती, जम्बूदीवपण्णत्तीसंगहो, लोकविभाग जैसे ग्रंथ प्रकाश में आये। मूर्तिदेवी ग्रंथमाला (भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली) एवं जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापुर, जैन संघ, मथुरा आदि के माध्यम में दर्जनों ग्रंथ प्रकाश में आये। डॉ. हीरालाल जैन, डॉ. आ.ने. उपाध्ये, डॉ. नेमिचन्द्र जी शास्त्री ज्योतिषाचार्य, पं. कैलाशचन्द्र जी सिद्धान्ताचार्य, डॉ. कस्तूरचंद जी कासलीवाल के प्रयासों से अनेक ग्रंथों का

सम्पादन/प्रकाशन हुआ। सेठ लक्ष्मीचंद सिताबराय जैन, ब्र. जीवराज जैन, साहू शांतिप्रसाद जी जैन के अवदानों को कौन भुला सकता है? जैन सिद्धान्त भवन, आरा, वीर सेवा मन्दिर-दिल्ली आदि ऐसे शोध के केन्द्र रहे जिनको हमेशा याद रखा जायेगा। कालान्तर में श्री देवकुमारसिंह जी कासलीवाल ने कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ की स्थापना की जिसने 30 वर्षों में बहुत प्रगति की है किन्तु अब आरा, दिल्ली, इन्दौर आदि के सभी केन्द्र धार खो चुके हैं या खोते जा रहे हैं।

आज जरूरत इस बात की है कि हम इन केन्द्रों की समस्याओं को समझ कर उन्हें पुनर्जीवित करें। शोध की उपेक्षा बहुत घातक होगी। जब माननीय न्यायालयों में कोई तथ्य प्रस्तुत करने की जरूरत पड़ती है तब शोध संस्थानों की याद आती है। श्री निर्मल कुमार जी सेठी ने विदेशों में जैन पुरातत्व की अच्छी खोज करी। हमारे श्वेताम्बर बंधु इस बाबत सजग हैं यदि हम उनसे ही कुछ सीख लें तो हमारा इतिहास बच जायेगा वरना जिस प्रकार की रुचियाँ वर्तमान में पनप रही हैं प्रचार की आकांक्षा पनप रही है उससे शोध की गुंजाइश ही कहाँ बची है।

मैं सोचता हूँ कि सभी तीर्थों के इतिहास एवं पुरातत्व पर स्वतंत्र पुस्तिकायें तैयार करी जानी चाहिए। भाई राजेन्द्र महावीर (सनावद) ने पावन पावागिरि शीर्षक एक अच्छी किताब मुझे कुछ समय पूर्व दी थी ऐसी किताबें मध्यांचल के नव मनोनीत अध्यक्ष श्री डी.के. जैन को सभी तीर्थों पर तैयार करानी चाहिए। शायद इस प्रकार उनका कार्यकाल अविस्मरणीय बन जायेगा। तीर्थों का इतिहास का सर्वेक्षण, संकलन एवं प्रकाशन जरूरी है।

इन छोटी छोटी पुस्तिकाओं को मिलाकर ही भविष्य में सम्पूर्ण इतिहास लिखा जा सकेगा। भारत के दिगम्बर जैन तीर्थों के ५ भाग अत्यंत मूल्यवान हैं। किन्तु अब वे पुनः संशोधित, सम्पादित होंगे।

तीर्थ वन्दना आपकी पत्रिका है इसको समृद्ध करने हेतु सुझाव भेजते रहे।

अखिल भारतीय निबन्ध प्रतियोगिता में सहभागी बने सभी उच्च शिक्षित युवाओं एवं पत्रकार बन्धुओं का आभार/निर्णय की प्रक्रिया चल रही है। शीघ्र ही परिणाम घोषित किये जायेंगे।

महावीर जयंती की बधाई एवं मंगल शुभकामनाएँ !

डॉ. अनुपम जैन,
ज्ञानछाया, डी-14, सुदामानगर, इन्दौर-452 009 (म.प्र.)
मो.: 94250 53822

भगवान महावीर के सिद्धांत अनुसार कैसे जिएं अपना जीवन ?

ब्र. डॉ. सविता जैन (अधिष्ठात्री)
श्री दिगम्बर जैन धर्मस्थल शीतल तीर्थ, बांसवाड़ा रोड़, रतलाम

महावीर जयंती के पावन प्रसंग पर भगवान महावीर एवं उनके सिद्धांतों की चर्चा से अधिक अर्चा की जरुरत है। आज व्यक्ति के जीवन में धर्म की बातें तो भरपूर हैं पर अन्तरंग वास्तविक धर्म शून्य है। अहंकार एवं स्वार्थ का कद बढ़ता जा रहा है। इस तरह के आचरण पर किसी कवि ने लिखा है कि-

राम गये नाम का आधार रह गया ।
घनश्याम गये गीता का सार रह गया ।।
महावीर का आदर्श जीवन में कहाँ है भाई ।
सिर्फ लेख व भाषण का व्यापार रह गया ।।

जहाँ एक तरफ धर्म के प्रतिसमाज का झुकाव बढ़ा है वहीं विसंगतियों ने भी जन्म ले लिया । व्यक्ति धार्मिक बनकर ख्याति, लाभ, पूजा, प्रतिष्ठा, उच्च पद को तो प्राप्त करना चाहता हें किन्तु तदअनुकूल आचरण में नहीं लाना चाहता है। वास्तव में मानवीय मूल्यों का ह्रास एवं दोहरी विचारधारा के परिणाम स्वरूप व्यक्ति किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जीवन को जीए जा रहा है। हमारे देश में हम विभिन्न त्यौहारों व जयंतियों का आयोजन प्रतिवर्ष करते हैं। इनका उद्देश्य यही होता है कि भगवन्तों, सन्तों एवं महापुरुषों ने जीवन में जिन सिद्धांतों का पालन कर अपने जीवन को जिया है। उन्ही सिद्धांतों का अनुकरण हम सब करें। किन्तु आज के समय में यहाँ की बात सुनकर यही छोड़ दी जाती हैं।

आज के भौतिकवादी युग में मनुष्य मशीन की तरह उद्देश्य विहीन, सुख विहीन एवं प्रगति की तलाश में जीवन जीता जा रहा है। उन सबके लिए यह विचारणीय- चिन्तनीय विषय है।

कैसे जिए अपना जीवन ?

पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण, भौतिकवादी युग में मनुष्य ने विकास के नाम पर बहुत कुछ पा लिया फिर भी वह असन्तुष्ट है क्योंकि मनुष्य ने आकाश में पक्षी की तरह उड़ने के लिए हवाई जहाज बना लिया, समुद्र में मगरमच्छ से भी तीव्रगति से चलने के लिए पनडुब्बियों बना ली। अर्थात् मनुष्य आकाश में उड़ सकता है। समुद्र के अन्दर तैर सकता है, किन्तु इस धरती पर मनुष्य-मनुष्य की तरह ठीक से नहीं चल सकता है। ऐसा विकास, वैज्ञानिक उन्नति का क्या लाभ? आज का विज्ञान भी अभाव रूप में परिवर्तित हो रहा है, विज्ञान वही जो स्वयं के साथ सभी का कल्याण करें, विध्वंस नहीं। भौतिकता की चकाचौंध में यांत्रिक जीवन जीते हुए व्यक्ति ने सुख- सुविधा के समस्त साधन सुलभ कर लिये किन्तु सर्वसुविधा के बाद भी वह अशांत अकुलाहटपूर्ण जीवन जी रहा है। सर्वसुविधा के साधनों के बीच वह निरंतर छटपटा रहा है। वह तृष्णा रूपी अग्नि में घी डाल कर उसे निरन्तर बढ़ा रहा है। क्योंकि कहा है कि-

"तन की तृष्णा छोड़ी है पाव आध या सेर"
मन की तृष्णा अनंत है समाएँ मेरु के मेरु।।

क्या आप इस तरह के जीवन से सन्तोष का अनुभव करते हैं? नहीं ना आज आपके पास सब कुछ है किन्तु समय नहीं है इसलिए कहा हैं,

व्यक्ति आज कमवक्त है । अरे कमबख्त नहीं
जिसके पास समय नहीं वह **कम+वक्त।**

बड़े पुण्योदय से मानव जीवन मिला है। इस थोड़े से जीवन को हम किस तरह से सम्पूर्ण रूप से जीए। इस पर विचार करना चाहिए-

हम कौन थे? क्या हो गये? और क्या होंगे अभी?
आओ विचारे आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।।

दिन-रात अर्थ लिप्सा में रत रहने वाले व्यक्तियों को ध्यान रखना चाहिए कि

धन से पुस्तक खरीदी जा सकती है, ज्ञान नहीं ।
धन से औषधि खरीदी जा सकती है, स्वास्थ्य नहीं ।।
धन से भोजन खरीदा जा सकता है, भूख नहीं ।
धन से बिस्तर खरीदा जा सकता है, नींद नहीं ।।
धन से सेवक जुटाएँ जा सकते हैं, अपनापन नहीं ।।

पर प्रश्न ये उठता है कि बिना धन के भी तो कुछ नहीं है। जीवनयापन के लिए अर्थ की आवश्यकता है, हाँ धन की आवश्यकता है किन्तु उसके लिए जीवन में संतुलन एवं सामंजस्य की आवश्यकता है। अर्थोपार्जन का मार्ग भी सही होना चाहिए क्योंकि कहा है, जैसा पैसा आता है, वैसे ही रास्ते चला जाता है।

अतएव सर्वप्रथम व्यक्ति को स्वयं अपने लिए कुछ नैतिक मूल्यों का निर्धारण करना होगा। यदि व्यक्ति स्वयं को सुधारने की कोशिश करेंगा तो घर सुधरेगा, घर सुधरेगा तो समाज सुधरेगा, समाज सुधरेगा तो देश सुधरेगा। प्रत्येक व्यक्ति मे असीमित क्षमता है, आवश्यक है उन क्षमताओं को पहचान कर उनको सही दिशा देने की। जीवन के विभिन्न स्तरों पर आदमी ने संघर्ष कर अपनी पहचान स्थापित कर ली किन्तु फिर भी वह अशांत, बीमार एवं नैराश्य में डूबा हुआ है, क्योंकि उसने भौतिक उन्नति तो कर ली किन्तु नैतिक या आध्यात्मिक उन्नति में शून्य बना रहा है। भौतिक उन्नति के साथ-साथ व्यक्ति को नैतिक अथवा आध्यात्मिक आचरण की उन्नति पर ध्यान देना होगा। उसके लिए भगवान महावीर के बताए पंचसूत्रों को जीवन में पूर्ण नहीं तो आंशिक रूप से उतारना होगा।

अहिंसा , सत्य, अर्चोर्य, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य

सर्वधर्मो में अहिंसा को प्रमुखता दी गई है। जैन धर्म का प्राण **अहिंसा** कहा है। अहिंसा पालन करने से बाकी सभी नियमों का पालन उसमें समाहित हो जाता है।

जैन धर्म में **अहिंसा** की बहुत सूक्ष्म में व्याख्या की गई है। अहिंसा के मुख्यतः दो भेद बताए है। द्रव्य अहिंसा एवं भाव अहिंसा। लेकिन आज हम धार्मिक क्लिष्ट शब्दों का उपयोग नहीं करके इसमें निहित भावों का सामान्य शब्दों में अर्थ को समझेंगे। अहिंसा का भाव है- दया और उदारता। हम प्राणीमात्र से वह व्यवहार नहीं करें जो हमें स्वयं के लिए पसंद नहीं है क्योंकि कहा है- बोये पेड़ बबूल के, आम कहाँ से पायें। हम ऐसा कोई कार्य नहीं करें जिससे किसी भी प्राणीमात्र को किसी भी प्रकार का शारीरिक या मानसिक कष्ट हो। अब आप कहेंगे कि व्यावहारिक जीवन में ये कैसे सम्भव है। पूर्णतः सम्भव नहीं है पर आप शुरुआत तो कर सकते हैं। धीरे-धीरे यह स्वभाव बन जाएगा। क्योंकि यह हमारी आत्मा का मूल स्वभाव है। आप अनुभव करेंगे यदि आपने किसी की मदद की है तो आपका मन कितना प्रसन्न रहता है। आपका मन प्रसन्नता व शांति का अनुभव करता है।

भगवान महावीर ने जीवनयापन का दूसरा सूत्र दिया है **सत्य**। आप अपने आचार-विचार व व्यवहार में **सत्य** धर्म का पालन करें। आप सबका प्रश्न होगा कि पूर्णतः **सत्य** बोलकर तो हम कोई कार्य ही नहीं कर सकते।लेकिन हम यह प्रयास तो करें कि निरर्थक बातों से असत्य से दूर रहे। मजाक या किसी को परेशान करना अथवा अपने अहंकार की पुष्टि के लिए तो असत्य नहीं बोलें। आप जानते हैं कि एक बार यदि झूठ बोला गया है तो उसे छुपाने के लिए सौ झूठ बोलने पड़ते हैं। सदैव मन में भय बना रहता है कि कही झूठ पकड़ा न जाए। रात-दिन यह चिंता सताती रहती है। जबकि सत्य बोलने वाले को कुछ याद नहीं रखना पड़ता है। क्योंकि वह जो बोलेगा वास्तविक ही होगा। उसके इस गुण से समाज में एक अलग छवि का निर्माण होगा। जो उसे कुछ विशेष होने की अनुभूति भी दिलायेगा। सत्य बोलने का अर्थ यह नहीं कि आप अपने कार्य के लिए तो असत्य बोले और अन्य लोगों के लिए **सत्य** बोलकर यह ढिंढोरा पीटे कि हम क्या करें हमने तो **सत्य** बोल दिया इससे आपका नुकसान हुआ तो हम क्या करें? यहाँ अहिंसा धर्म का पालन करते हुए हमें किसी भी प्रकार जीव हिंसा या नुकसान, अपमान की बात करने की बजाए मौन रहना ही श्रेयस्कर है। हमें हमेशा ही हित-मित-प्रिय वाणी बोलनी चाहिए। तो ही सत्य धर्म का सही पालन सम्भव है।

भगवान महावीर ने तीसरा सूत्र दिया है- **अचौर्य**- अर्थात् चोरी नहीं करना। चोरी से तात्पर्य यहाँ किसी का सामान चुरा लेना ही चोरी नहीं है। बिना पूछे किसी की वस्तु को ग्रहण कर लेना भी चोरी है। इसमें सामान कम तोलना, वस्त्र कम मापना, अच्छी वस्तु बताकर उसे नहीं देना आदि छोटी-छोटी बातें सम्मिलित हैं। यहाँ पर **सर्वजन हिताय सवर्जन सुखाय** की बात को स्मरण रखना चाहिए। मनुष्य के विचारों में उसकी कथनी-करनी में सामंजस्य होना चाहिए। जिससे आपसी विश्वास का सौहार्द्रपूर्ण वातावरण बने।

भगवान महावीर ने चतुर्थ सूत्र दिया है- **अपरिग्रह**। अहिंसा की साधना के लिए अपरिग्रह की साधना नितान्त आवश्यक है। क्योंकि अहिंसा व अपरिग्रह एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जहाँ परिग्रह है वहाँ हिंसा नियम से है। परिग्रह के धरातल पर ही महाभारत की रचना होती है। यदि कौरवों ने पाँच गाँव का लोभ त्याग कर दिया होता तो महाभारत युद्ध ही नहीं होता। मनुष्य की इच्छाएँ अनंत है उसके पास एक साइकिल है तो एक स्कूटर की दरकार रहती हैं। स्कूटर आ गया तो कार की इच्छा होती है। एक कार हो गई तो और उच्च तकनीक वाले फोर व्हीलर की आवश्यकता महसूस होने लगती हैं। अब तो मोबाइल का जमाना है। हमारी आवश्यकता अनुरूप उसका उपयोग हमें सुख व शांति प्रदान करेंगा किन्तु जैसे ही हमने अपने जीवन स्तर का प्रतीक मानने की गलती की तो ये हम पर हावी होने लगते हैं। क्योंकि भौतिक सुख-सुविधा के साधनों का और उन्हें पाने की इच्छा का कोई अन्त नहीं। मानसिक शांति एवं आत्मिक सन्तुलन बनाये रखने के लिए मनुष्यो को अपनी इच्छाओं पर संग्रह रखने की वृत्ति पर नियंत्रण रखना चाहिए। प्रकृति ने हृदय खोल कर हमें सभी संसाधन प्रदान किये है किन्तु कुछ व्यक्तियों का समूह ही उनका दोहन कर ले तो बाकी मनुष्यों का क्या होगा? शक्ति सम्पन्न एवं समृद्ध व्यक्तियों को कमजोर वर्ग को समान अवसर देने का प्रयास करना ही सबसे बड़ी अपरिग्रह की भावना है। परिग्रह अर्थात् बहुत साधन या पदार्थ संग्रहीत होना। आम आदमी समझता है जितना धन उतना पुण्य। किन्तु जो धनिक है वह रात्रि में ठीक से सो नहीं पाता उसे दिन-रात उसकी सुरक्षा, विनियोग की चिन्ता लगी रहती है। जबकि सीमित धन वाला किसी भी समय सुख की नींद निकाल लेता है। समृद्धशाली व्यक्ति परिवार पर विश्वास खो देता है। रोजमर्रा में दिखता भी है धन-सम्पत्ति के लालच में भाई-भाई, पिता-पुत्र, भाई-बहन आदि रिश्तेदार आपस में ही खून के प्यासे हो जाते हैं इसलिए कबीर दासजी की पंक्तियाँ ध्यान रखनी चाहिए कि-

सांई इतना दीजिए जा में कुटुम्ब समाएँ।
मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाए।।

भगवान महावीर ने जीवन का महत्वपूर्ण सूत्र दिया है - **ब्रह्मचर्य**। ब्रह्मचर्य व्रत का पूर्ण पालन तो त्यागी, व्रती, सन्त एवं महात्मा ही करते हैं।

..... *शेष पृष्ठ 9 पर*

महावीर की दिव्य वाणी

- सुबोध मलैया, सागर (मध्यप्रदेश)

भगवान् महावीर का परिनिर्वाण हुए २५४८ वर्ष बीत गए। भगवान् महावीर, जैन धर्म जिसका इतिहास दस हजार वर्ष पुराना है, के चौबीसवें और अन्तिम तीर्थंकर हैं संस्थापक नहीं परन्तु उनसे पहिले तीर्थंकरों के बारे में व उनके समय में जैन धर्म की स्थिति के बारे में ऐतिहासिक व अकाट्य प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं इसीलिए जैन धर्म का सही स्वरूप वही माना जाता है जो महावीर ने अपनाया, प्रचारित किया था, तीर्थंकर किसी देवी-देवता के अवतार नहीं वे तो सामान्य पुरुष होते हैं जो पूर्व जन्म की विशिष्ट साधना-आराधना द्वारा तीर्थंकर नाम कर्म-गोत्र का बन्ध करते हैं, तीर्थंकर न किसी को शाप देते है और न आशीर्वाद यह उनकी सदेह वीतराग अवसर की संस्कृति है। आप क्यों नहीं बन सकते भगवान महावीर? लोक का कल्याण करते-करते विश्वसनीय की वृत्ति का पालन करते रहे और अंत में निज का भी कल्याण कर गये। वह कोई हिन्दू धर्म की तरह अवतारी पुरुष नहीं थे, थे तो हमारी आपकी तरह साधारण इंसान ही, उन्होंने ईश्वर का सर्व शक्तिमान और विश्व निर्माता या विधाता होना अस्वीकार किया उनका मानना है कि यह विश्व हमेशा था और रहेगा। मनुष्य को ही उन्होंने सर्व शक्तिमान माना और ईश्वरत्व को चैतन्य में एक सीची हुई शक्ति (आत्मा) के रूप में प्रस्थापित कर दिया। आत्मा ही अपने विशुद्ध रूप में परमात्मा है, यह कहकर उन्होंने मनुष्य को अपूर्व गौरव, गरिमा और सम्मान दिया जो इतिहास में अपूर्व है, भगवान् महावीर ने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति परमात्मा होने, मुक्ति पाने के, वही बीज और शक्ति लेकर पैदा हुआ है जो उनमें थी और सब में महावीर होने की क्षमता है।

भगवान महावीर विश्व इतिहास के अद्वितीय महापुरूष हैं, वे एक ऐसी विलक्षण हस्ती जिसका कोई जवाब नहीं है। वे अद्भुत, अनुपम और बेजोड़ हैं। आध्यात्म जगत में महावीर जैसा विरल व्यक्तित्व ढूँढ़ने पर भी दूसरा नहीं मिल सकता। जैन धर्म का स्पष्ट अभिमत है कि कोई भी व्यक्ति आध्यात्मिक उत्कर्ष कर मानव से महामानव बन सकता है, तीर्थंकर बन सकता है।

जैन धर्म में मान्य तीर्थंकरों का अस्तित्व वैदिक काल के पूर्व भी विद्यमान था। इतिहास इस परम्परा, के मूल तक अभी तक नहीं पहुँच सका है। उपलब्ध पुरातत्त्व सम्बन्धी तथ्यों के निष्पक्ष विश्लेषण से यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि तीर्थंकरों की परम्परा अनादिकाल है, वैदिक वाङ्मय में वात-रशना मुनियों, केशी मुनि और व्रात्य क्षत्रियों के उल्लेख मिलते हैं, जिनसे स्पष्ट है कि पुरुषार्थ पर विश्वास रखने वाले धर्म के प्रगतिशील व्याख्याता तीर्थंकर प्रागैतिहासिक काल में भी विद्यमान थे, मोहन-जो-दडो के खण्डहरों से प्राप्त योगीश्वर ऋषभ की कायोत्सर्ग मुद्रा इसका जीवन्त प्रमाण है यहाँ से उपलब्ध पुरातत्त्व संबंधी सामग्री भी तीर्थंकर-परम्परा की पुष्टि करती हैं। भगवान महावीर ने अनेकान्त द्वारा जैन धर्म को युगानुकूल रूप दिया, २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर और प्रथम तीर्थंकर वृषभदेव के बीच का समय असंख्यात वर्षो का है। इतिहासकारों द्वारा तीर्थंकर नेमिनाथ का काल ई. पू. १००० के लगभग माना जाता है। भगवान् पार्श्वनाथ का निर्वाण काल ई. पू. ७७७ है। ई. पू. ५९९ में भगवान महावीर का जन्म हुआ था। भगवान महावीर जैन धर्म के तीर्थ प्रवर्तक कहे गये हैं अतः यह सुविदित है कि जैन तीर्थंकरों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है।

भगवान महावीर के कुछ निर्देश जैन अभिलेखों में मिलते हैं, पाषाण और धातु-पत्रकों पर, पाषाण पर मिलने वाले अभिलेख प्रतिमाओं के आसन पर, प्रतिमाओं के पृष्ठभाग पर, तीर्थंकर एवं आचार्यो के चरण-चिन्हों पर, स्तम्भ, गुफा, मानस्तम्भ, मन्दिर की वेदिका, चौकोर शिला फलक, ध्वज स्तम्भ इत्यादि पर उत्तीर्ण हैं, धातु फलक-ताम्रपट्ट, पीतल एवं अन्य धातु से निर्मित प्रतिमाओं, मेरू, यन्त्र लेख, सिद्ध प्रतिमाओं पर उत्कीर्ण हैं, ये अभिलेख भगवान के जीवनवृत्त के कुछ निर्देशों को जानने, समझने के लिए प्रामाणिक स्रोत हैं। जैन धर्म के तीर्थंकरों में भगवान महावीर ही ऐसे व्यक्तित्व हैं जिनकी ऐतिहासिकता निर्विवाद रूप से स्वीकार की गयी है।

महावीर-जीवन वृत्त के मूल आधार-स्तम्भ जैन आगम हैं। ''उपलब्ध समस्त जैन साहित्य के उद्गम का मूल भगवान महावीर की वह दिव्य वाणी है, जो बारह वर्ष की कठोर साधना के पश्चात् केवल ज्ञान की प्राप्ति होने पर लगभग ४२ वर्ष की अवस्था में (ई. पू. ५५७ वर्ष) श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन ब्राह्म मुहूर्त में राजगृही के बाहर स्थित विपुलाचल पर्वत पर प्रथम बार निःसृत हुई और तीस वर्ष तक निःसृत होती रही थी। "भगवान महावीर की वाणी में तत्त्वज्ञान, आचार, लोक विभाग आदि अनेक विषयों के संबंध में

उनकी स्वतंत्र और मौलिक देन है, भगवान महावीर ने तत्कालीन लोक भाषा मागधी तथा शौरसनी (अर्द्ध मागधी) को अपने उपदेशों का माध्यम बनाया था। भगवान महावीर के सिद्धान्तों और वाङ्मय का अवधारण एवं संरक्षण उनके उत्तरवर्ती श्रमणों और उपासक आचार्यों ने किया है, भगवान महावीर के जीवन और चिन्तन के सम्बन्ध में प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश और आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं और द्रविड़ भाषाओं के साहित्य में विपुल मात्रा में वर्णन प्राप्त होता है, उनके चरित्र एवं व्यक्तित्व को लेकर अनेक पौराणिक आख्यान-उपाख्यान तथा चमत्कारिक, अलौकिक अद्भुत घटनाएं और प्रसंग उपलब्ध होते हैं। देश के विभिन्न स्थानों में उन्होंने विहार करके धर्म-प्रचार किया। इस विहार के कारण ही मगध राज्य का नाम बिहार पड़ गया। भगवान महावीर ने पूर्ववर्ती तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित विचार धाराओं से प्रेरणा लेकर दृढ़ श्रद्धा से ज्ञान-चारित्र की साधना करके अर्हंतकेवली का पद प्राप्त किया। उस ज्ञान के द्वारा युगीन समस्याओं की व्याख्या करके उनके समाधान भी समन्वयवादी, मानवतावादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत किये, महावीर स्वामी ने सती प्रथा और पशु बलि की निर्दयता और हिंसा का तांडव देखा तब उन्होंने अपने प्रभावपूर्ण उपदेशों से जगह-जगह होने वाली सती प्रथा तथा पशु बलि जैसे क्रूर कर्म काण्डों को बंद कराया।

जैन धर्म किसी एक सम्प्रदाय का धर्म नहीं है, जैन धर्म को जो अंगीकार करता है वही जैन है। अहिंसा के मूल मंत्र को जैन धर्मावलंबी अपने सांस्कृतिक मूल्यों द्वारा कायम किये हुए हैं और यही उनकी अमूल्य धरोहर है। भले ही जैन धर्म में विभाजन हुए, दिगम्बर से श्वेताम्बर अलग हुए, समय की मार, आतताइयों के आक्रमण तथा शरीर शिथिलता, पर-राज्य के भय से शास्त्र पूजक समैया, स्थानकवासी भी हुए मगर हिंसा का वीभत्स रूप ऐसा नहीं आया कि हमारे प्रभु की शोभा फीकी पड़ जाये। आज निश्चय-व्यवहार के नाम पर भी मतभेद हैं कभी-कभी आक्रोश भी फूटता है, वातावरण में उत्तेजना और हिंसा का वातावरण भी कुछ समय को नजर आता है मगर अजब-गजब है जैनियों की सहिष्णुता, जैनियों की सहनशीलता, कि बाद में सभी एक दिखते हैं सभी प्रभु के भक्त, भगवान् के अनुयायी, शांत निर्मल चित्त, मगर अन्य धर्म में ऐसा नहीं है। जैन धर्म स्वयं इस बात का सबसे बड़ा प्रमाण है कि जैन जाति के लोग, वैश्य वर्ण के लोग तीर्थंकर जैसी विभूति को न पा सके उसे पाने वाले तो जैन धर्म के किसी न किसी रूप में संपर्क में आये इक्ष्वाकु, नागवंशी, नाथवंशी, यदुवंशी क्षत्रिय ही हुए हैं। आत्मा शाश्वत सत्य है कर्म भी शाश्वत सत्य है क्योंकि आत्मा अनादि और अनंतकाल तक रहेगी उसी प्रकार कर्म भी अनादिकाल से हैं और अनंतकाल तक रहेंगे।

महान चिन्तक लुई फिशर लिखते हैं। भारत ने सदा ही अपना सर्वोत्तम विश्व को दिया है। यह वह धरती है जहाँ महावीर और बुद्ध जन्म लेते हैं। अहिंसा के रास्ते पर वही चल सकता है जो मानवीय संवेदनाओं एवं सत्य में जीता है। आखिर कायर को कैसे अहिंसा का पाठ पढ़ाया जाए ? अहिंसा तो वीरों की नियति है सही साधन और गलत साधन के बीच का फर्क अहिंसा के भाव से ही आता है और अंततः साध्य को हिंसात्मक होने से बचाता है, अच्छे कर्मों से जब अच्छा फल मिल सकता है तो हम क्यों न अच्छे कर्म करें ? चन्दन बाला के पुरुषार्थ ने प्रभु महावीर को आने को मजबूर कर दिया। खेवपत, देवपत के भक्ति भाषा से चढ़ाये ज्वार के दाने हीरे-मोती बन गए तब क्यों न हम भी ऐसा पुरुषार्थ करें कि हमारे कर्मों का बंधन ही कट जाये, जैन धर्म ही एक मात्र ऐसा धर्म है जो प्रत्येक जीव की स्वतंत्रता को मान्यता देता है तथा प्रत्येक आत्मा में उनके विकारी भाव मिटते ही स्वभाव में स्थिरता होने से परमात्मा बनने की शक्ति बतलाता है।

भगवान महावीर अन्तिम समय में पावापुरी के बाहरी सरोवर के मध्य में स्थित शिलातल पर जाकर ध्यानारूढ़ हो गये और वहीं से योग-निरोध कर अघाति कर्मों का क्षय करते हुए निर्वाण को प्राप्त हुए।

..... *पृष्ठ 7 से शेष*

किन्तु परिवार में भी आज इनका पालन आवश्यक हो गया है। आजकल पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण से लोक लाज, संस्कार आदि की बातें दकियानूसी लगने लगी। किन्तु खुलेपन का दुष्प्रभाव हम अपनी आँखों से स्पष्ट देख रहे हैं। आज अखबार की मुख्य खबर प्रतिदिन एक निर्भया की कहानी कहती है। हम सब उन्हें पढ़कर नजरअंदाज कर देते हैं। हमें इनकी मूल पर पहुँच कर स्वस्थ मानसिकता के समाज के निर्माण पर बल देना होगा। पुरुषों की इस विकृत मानसिकता पर आसपास के लोगों के व्यवहार एवं सोच का प्रभाव होता है। क्योंकि व्यक्ति का बौद्धिक निर्माण कई चीजों पर निर्भर रहता है- जैसे पैतृक संस्कार, वातावरण, पालन-पोषण, अध्ययन और अनुभव।

बौद्धिक निर्माण के अनुरूप ही मान्यताएँ एवं विचारधाराएँ बनती है। चिन्तन एवं स्वस्थ विचारधारा की कमी से कुविचार एवं कुप्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती है। अतएव बचपन से ही बच्चों में शील गुण एवं समाज के प्रति दायित्वों का बोध करना चाहिए। प्राचीनकाल में बच्चों के शिक्षण काल को ब्रह्मचर्य आश्रम की संज्ञा देने के पीछे यही मुख्य कारण था।

महत्वाकांक्षाओं एवं प्रयोजनों के आधार पर ही व्यक्तिगत अथवा सामाजिक रूप से हमारी प्रवृत्तियाँ परिवर्तित होती रहती है। यही कारण है कि आपस में विचारों की समानता कम पाई जाती है। हम एक दूसरे के प्रति कितने ही निष्ठावान क्यों न हो, तथापि किसी एक विषय में हम सहमत नहीं होते है। इस हेतु स्याद्वाद व अनेकान्त के मार्ग को अपनाना होगा। अर्थात प्रत्येक विचार को दोनों पक्षों से देखना व सामने वाले के विचारों को भी समझना। मान लीजिए एक गिलास में पानी आधा भरा है। एक व्यक्ति कह रहा है कि आधा गिलास खाली है, वह दूसरा कह रहा है कि आधा ग्लास भरा है। दोनों अपनी-अपनी बात सत्य कह रहे हैं पर अपनी सोच से हट नहीं रहे हैं। सकारात्मक सोचने वाला व्यक्ति भरे पेट की रट लगाए हुए है। नकारात्मक विचारधारा वाला व्यक्ति गिलास खाली होने को प्रमुखता दे रहा है। सत्य होने पर भी विचारों में टकराहट है। स्याद्वाद की दृष्टि से कहा जा सकता है कि गिलास आधा भरा है, आधा खाली है। अतएव हठग्राहिता को छोड़कर सहिष्णु बनना जीवन का अभिन्न अंग है।

अंततः यही कहना चाहूंगी कि यह हमारा जीवन है हम इसे कैसे जिए? यह हमें अपने विवेक से तय करना आवश्यक हैं। हर सिक्के के २ पहलू होते हैं। हमें अपने जीवन की परिस्थितियों के अनुरूप अपने मन मैं भगवान महावीर के सिद्धांतों के अनुसार संतोष, सहिष्णुता, उदारता आदि गुणों को स्थान देना है या लक्ष्य विहिन असंतुष्ट जीवन को जीना है।

महावीर और उनकी वाणी..... आज भी प्रासंगिक है

- श्रीमती उमा मालवीय, नई दिल्ली

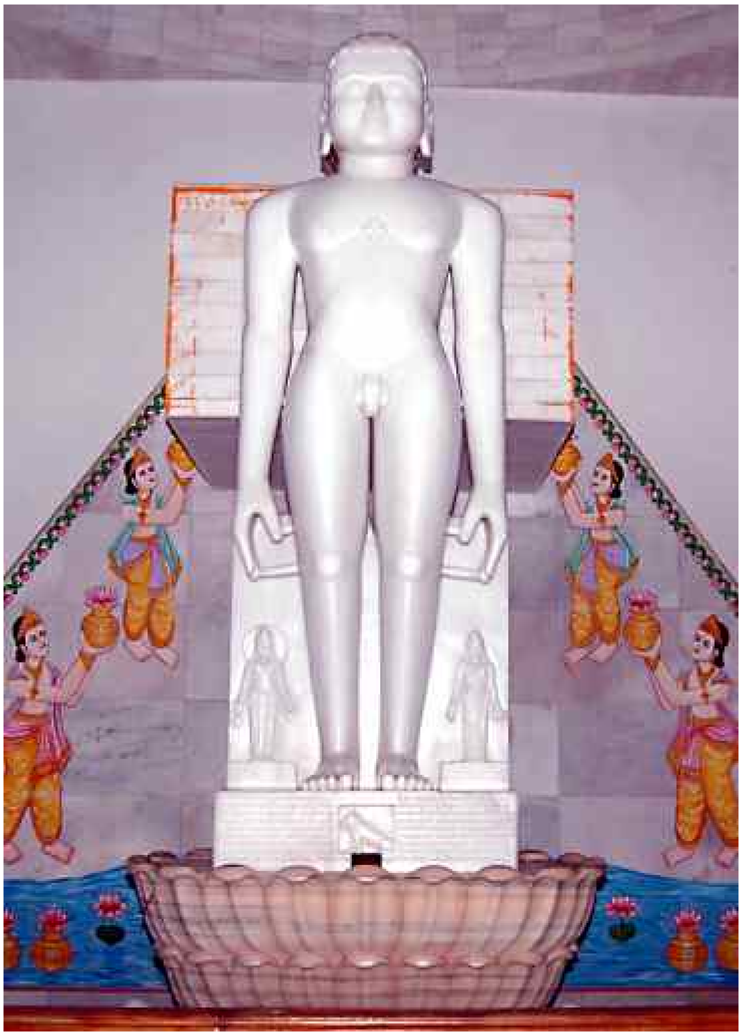

हमारे अपने पूर्वज जिन संस्कृति के प्रति कितने श्रद्धावान थे जिन्होंने अनेक विपरीत परिस्थितियों के पश्चात भी इन जिन बिम्बों का निर्माण करवाकर जैनत्व की पहचान को अक्षुण्ण बनाए रखने में अपना महान अविस्मरणीय योगदान दिया। हम सभी उनके प्रति नतमस्तक हैं जिन्होंने इन महान जिन बिम्बों का निर्माण कराया, लेकिन काल के क्रूर चक्र ने मुस्लिम आक्रान्ताओं के हाथों से जिन बिम्बों का भंजन कर संस्कृति को नष्ट करने का असफल प्रयास किया। इस महान जैन संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्द्धन में हम-आप सभी मिलकर ऐसा सार्थक प्रयास करें जिससे हमारी जैन संस्कृति की पहचान अक्षुण्ण बनी रहे और जिन संस्कृति के लिए हम गर्वित हो सकें।

हमारे सार्वजनिक जीवन में संत, महात्मा, साधु परिव्राजक ऐसे ही क्रान्ति के चेता हैं जों परम्पराओं को नष्ट किए बिना न तो उनका खण्डन करते हैं और न ही उन्मूलन उसका परिस्थितिजन्य नवीनीकरण कर देते हैं हजारों वर्षों से उनका परिमार्जन होता आ रहा है। एक नवोन्मेष होता है और जीवन को दिशा मिलती है। भारतीय संस्कृति में सदैव परम्पराएं रही हैं। मानव सभ्यता के शैशवकाल में नाभिराय के पुत्र जैन धर्म के आद्य तीर्थंकर ऋषभदेव जिन्हें आदिनाथ भी कहा जाता है एवं जिन्हें सनातन वेद पुराण में भी भगवान के अवतार के रूप में माना गया है, श्रमण परम्परा के उच्चतम मूल्यों को स्थापित किया था। तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्र भरत चक्रवर्ती के नाम पर ही इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा। ऋषभदेव तीर्थंकर की परम्परा में चौबीस तीर्थंकर हुए जिनमें २४ वें तीर्थकर भगवान महावीर थे, जिन्हें ईसा पूर्व ५५८ में वैशाख शुक्ल दशमी को ऋजुकूला नदी के तट पर शाल्मली वृक्ष के नीचे कैवल ज्ञान हुआ। महावीर और उनकी वाणी आज भी प्रासंगिक है इस पर आधा से कुछ आधा भी पालन हो तो सम्पूर्ण विश्व का कल्याण हो जाए। महावीर का यह दर्शन पूरे जीवन को बदल सकता है साथ ही भौतिकता की अग्नि में दग्ध विश्व को शाश्वत शांति का विग्दर्शन करने में सक्षम है। श्रमण संस्कृति के अन्तिम तीर्थंकर श्री भगवान महावीर हुए उन्होंने रूढ़ियों और पाखण्डों का विरोध किया। सर्वोच्च मूल्यों की विरासत जो श्रमण संस्कृति ने हमें दी ऐसी महावीर वाणी का हम सदैव स्मरण करेंगे। भगवान महावीर के उपदेश समग्र विश्व शांति की विचार धारा में समाहित हैं। महावीर और उनके पूर्ववर्ती तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित विचार धारा श्रमण संस्कृति की मुख्य धरा है।

महान गौरवशाली भारत वसुन्धरा, भगवान ऋषभदेव, भगवान महावीर आदि अनेक महापुरुषों के धर्मोपदेशों से अभिसिंचित होती रही है। भगवान महावीर के सिद्धान्तों के आलोक में आगम और आध्यात्म का बिगुल बजता रहा है। भगवान महावीर के सिद्धान्त एक ऐसी युगीन महाशक्ति बनकर उभरे जिन्होंने बढ़ते पापाचार, गिरते नैतिक मूल्यों, पाशविक वृत्तियों, उन्माद में झुलसती हुई राष्ट्रगत सभ्यताओं, जातीय व साम्प्रदायिक संकीर्णताओं में जकड़े हुए मानव और मानव जगत को सही दिशा बोध कराते हुए धराधाम को प्राण प्रदान किया था। भगवान महावीर ने अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह इन पांच सिद्धांतों के सम्मिश्रण से मानव के प्रत्येक प्रकार से सुखी, समृद्ध एवं शान्त जीवन के लिए एक सुव्यवस्थित जीवन शैली का निर्माण किया। हम यह भूल गये कि विवेक के अभाव में हमने भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों को विस्मृत कर विकास के एक ऐसे विकृत दर्शन को स्वीकार कर डाला है जो सर्वभक्षी बनकर हमें ही निगलने को आतुर हैं और इस अवांछनीय पश्चिमीकरण के हवन कुण्ड में हमने अपने अमूल्य मानव मूल्यों तक की आहुति दे डाली है। हम यह भूल गये कि परम वैभवशाली भारत के निर्माण के लिए पश्चिमी चश्मा उतारकर भारत को, भारत की आंखों

से देखने की आवश्यकता है। भगवान महावीर ने जो विश्व को अहिंसा की अमूल्य निधि सौपी थी स्वार्थ और लालच के चलते उसे ताक पर रख दिया जिस कारण वर्तमान युग अनेकों विकृतियों और विसंगतियों के दौर से गुजर रहा है। **तीर्थकरों और अवतारों के जिस देश से हमेशा करुणा, दया, प्रेम और वात्सल्य का निर्यात होता था आज वही देश भारत, निरीह अबोध पशुओं को मौत के घाट उतार कर उनका मांस निर्यात कर मात्र पशु हत्या के पाप को अपने देशवासियों के लिए संचयित नहीं कर रहा है अपितु अपने महान कर्मयोगियों द्वारा प्रतिपादित स्वर्णिम पृष्ठों को भी कलंकित कर रहा है ?** भगवान महावीर ने सती चन्दनबाला को साध्वी पद प्रदान कर नारी में अन्तर्निहित शक्तियों को परिवार, समाज और राष्ट्र के समक्ष उजागर करते हुए स्पष्ट कर दिया था कि बिना नारी उत्थान के किसी भी राष्ट्र का उत्थान संभव नहीं है।

समय के उलट फेर और राजनीतिक उथल-पुथल के कारण वैशाली खण्डहरों में बदल गयी। हमने तो उसे भुला भी दिया किन्तु वैशाली ने अपने योग्य पुत्रों को नहीं भुलाया। यहाँ के जैन अवशेषों में एक उर्वर भू-खण्ड अभी भी शेष है जो यहाँ के नाथ क्षत्रिय परिवार के अधिकार क्षेत्र में है। जहाँ तक इस परिवार के लोगों की स्मृति जाती है, इस भू-खण्ड पर कभी खेती नहीं की गयी क्योंकि उनकी प्रत्येक पीढ़ी यह विश्वास करती आ रही है कि भगवान्महावीर का जन्म इसी स्थान पर हुआ था, इसलिए यह पूजनीय है, इस पर हल नहीं चलाना चाहिए। भारत के धार्मिक इतिहास में यह विशिष्ट घटना है कि इस परिवार की प्रत्येक पीढ़ी के लोग २५०० वर्ष लम्बे समय से इस स्थान की गरिमा और महावीर की स्मृति को अक्षुण्ण रखे हुए हैं।

भगवान महावीर स्वामी ने अपनी दिशा बदली और उनकी दशा बदल गयी। वे सरागी से वीतरागी हो गए। अज्ञानी थे, केवल ज्ञानी हो गए। हमारे जैसे इंसान थे, महान हो गए, महान ही नहीं भगवान हो गए। भगवान महावीर का यह संदेश सच्चे सुख के लिए साधना में जुटने की बजाए भौतिक सुख-सुविधाओं में लिप्त है। जबकि सुख साधनों में ही नहीं आत्म साधना में है यह महावीर स्वामी का ही नहीं सभी साधकों का अनुभव है। अपनी चिन्ता करें, दूसरों की चिन्ता छोड़ो। दूसरों की चिन्ता करने से नहीं, अपनी आत्मा का चिन्तन करने से होती है इसीलिए भगवान श्री महावीर स्वामी कहते हैं यही समझदारी है। महावीर स्वामी ने अपनी आत्मा की चिन्ता की इसलिए महावीर हो गए, महावीर की तरह अपनी आत्मा की चिन्ता करेंगे तब एक न एक दिन महावीर जैसे बन जावेंगे। महावीर बनने की इच्छा रखने वाले हम सभी जन महावीराष्टक के एक- एक शब्द, एक-एक पंक्ति की गहराई में उतरे ताकि जो महावीर ने पाया है उसे हम भी पा सके।

महावीर स्वामी ने ज्ञान की जगह ध्यान पर ज्यादा जोर दिया। यही कारण है कि सभी तीर्थंकर भगवन्तों की प्रतिमाएं ध्यान अवस्था में ही होती हैं। महावीर का ज्ञान, ध्यान की गहराईयों में डूबने से ही कैवल्य ज्ञान बन सका है, क्योंकि ध्यान की अग्नि ही कर्मों के समूह को जलाने में सक्षम है। हमें भी महावीर स्वामी की बात आत्मसात करना है ताकि हमारा ज्ञान भी कैवल्य ज्ञान हो सके। पुण्य से पुरुष तो बन गए अब महापुरुष बनने का पुरुषार्थ भी करे इस मार्ग पर हम जैसे ही चले अपनी आँखों में महावीर स्वामी को बसा के चलें।

जैन धर्म पुरुषार्थ प्रधान धर्म है, पुरुषार्थ ही हमारे भाग्य को जागृत करता है। महावीर स्वामी भाग्य से नहीं अपने पुरुषार्थ से भगवान बने हैं। हमारा पुरुषार्थ हमें जो चाहे वह बना सकता है। महानता व्यक्ति के कर्म से आती है। व्यक्ति जन्म से नहीं कर्म से महान होता है। आज महावीर पहले से ज्यादा प्रासंगिक हो गए है। समय रहते यदि समाज नहीं चेती तब महावीर का धर्म सिर्फ चर्चाओं में रह जायेगा जबकि महावीर का जैन धर्म चर्चा का नहीं धर्म का विषय है। महावीर ने अपने जीवन को ऐसे जिया कि स्वयं को जीतकर महावीर हो गए। यदि हमें भी कुछ बनना है तो जीने का अंदाज बदलना होगा और वह भी कल नहीं आज बदलना होगा। महावीर को जानने की कम, जीने की ज्यादा आवश्यकता है, महावीर को जीने वाला ही महावीर का सच्चा अनुयायी होता है महावीर को जीने का अर्थ है, महावीर की मानना और महावीर को जानने का अर्थ है महावीर को मानना,

(लेखिका प्रख्यात समाजसेवी श्रीमति उमा मालवीय, अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिलब्ध, समाज गौरव स्व.श्री रतनलाल मालवीय पूर्व केन्द्रीय मंत्री, भारतीय संविधान निर्मात्री सभा के सदस्य की पुत्र वधु है।)

तीर्थंकर ऋषभदेव ने मानव को जीवन-मरण की कला सिखायी

- डॉ. सुनील जैन संचय, ललितपुर

इन दिनों अयोध्या नगरी विश्व भर के आकर्षण का केन्द्र बनी हुयी है। धर्मनगरी अयोध्या भूमि ऐसी है, जहां पर सभी धर्मों के बहुरंगी फूल खिले। जैन धर्म के कुल 24 तीर्थंकर हुए, जिनमें से पांच तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या ही है। अयोध्या में जैन धर्म की परंपराएं और जड़ें बहुत ही गहरी एवं पुरातन है। पांच तीर्थंकर इच्छवाकु वंशी इसी धरती पर हुए थे। यहीं से उन महापुरूषों ने पूरे विश्व को मानवता व शिक्षा का संदेश दिया।

अयोध्या नगरी की रचना के बारे में वर्णन आता है कि मरुदेवी और राजा नाभिराय से अलंकृत पवित्र स्थान में जब कल्पवृक्षों का अभाव हो गया तब उनके पुण्य विशेष से इंद्र ने एक नगरी की रचना करके उसका नाम 'अयोध्या' रखा।

तिलोयपण्णत्ती (अ. 4 पृ. 347) के अनुसार- छठे काल के अंत में जब प्रलयकाल आता है तब उस प्रलय में यहां आर्यखण्ड में एक योजन नीचे तक की भूमि नष्ट हो जाती है।

उस काल में अयोध्या नगरी स्थान के सूचक नीचे चौबीस कमल देवों द्वारा किये जाते हैं। भक्तादि क्रिया संग्रह (टिप्पण), इन्हीं चिन्हों के आधार से देवगण पुनः उसी स्थान पर अयोध्या की रचना कर देते हैं। इसीलिए अयोध्या नगरी शाश्वत मानी गई है।

वैदिक ग्रंथों में भी अयोध्या का अत्यधिक महत्व प्रतिपादित किया गया है। अथर्ववेद दशस्कंध में कहा है "अष्टचक्रानवद्वारादेवानांपूरयोध्या।" अर्थात् यह देवों की नगरी अयोध्या आठ चक्र और नव द्वारों से शोभित है। रूद्रयाचल ग्रंथ में तो अयोध्यापुरी को विष्णु भगवान का मस्तक कहा है। बाल्मिकी रामायण में इसे मनु द्वारा निर्मित बारह योजन लंबी माना है।

हरिवंशपुराण में राजा नाभिराज के महल को 81 खन उँचा, रत्ननिर्मित सर्वतोभद्र नाम से कहा है। शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या में राजा नाभिराय व महारानी माता मरूदेवी के आंगन में जन्म लेकर जैनधर्म के इस युग के प्रवर्तक व प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ने प्राणीमात्र का कल्याण किया। जब कल्पवृक्ष लुप्त होने लगे तो जनमानस को जीवनयापन की चिंता होने लगी, ऐसे समय में तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने असि, मसि, कृषि, शिल्प, वाणिज्य व कला का अद्भुत ज्ञान प्रदान कर जीवन जीने की कला सिखाई। अपनी पुत्रियों ब्राह्मी व सुंदरी को अंक व लिपी का ज्ञान देकर महिला सशक्तिकरण का एहसास लोगों को करवाया। आपने न्याय व नीति पूर्वक राज्य कर समस्त संसारिक सुखों से वैराग्य धारण कर कर्मों की निर्जरा हेतु जैनेश्वरी दीक्षा अंगीकार की और मोक्ष को प्राप्त किया। उन्होंने कर्मों पर विजय प्राप्त कर दुनिया को त्याग का मार्ग बताया। मानवीय गुणों की सभी सीमाएं तीर्थंकर ऋषभदेव ने उद्घाटित कीं। उन्होंने प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों मार्गों का आचरण करके दिखाया। इन्हीं के ज्येष्ठ पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ा। ऋषभदेव ने भारतीय संस्कृति को बहुत कुछ दिया है। छह कर्मों के द्वारा उन्होंने समाज को विकास का मार्ग सुझाया वहीं अहिंसा, संयम तथा

श्री आदिनाथ दिगंबर जैन अतिशय क्षेत्र, सारवार, राजस्थान

तप के उपदेश द्वारा समाज की आंतरिक चेतना को भी जगाया। यही कारण है कि उनका एक प्रसिद्ध कथन है कि- कृषि करो या ऋषि बनो। अर्थात् जीविका के साथ-साथ आध्यात्मिक मूल्य भी आवश्यक हैं। वैदिक वाड्मय में तीर्थंकर ऋषभदेव को आर्हत् धर्म के प्रतिष्ठापक के रूप में स्वीकार किया गया है।

तीर्थंकर ऋषभदेव ने शारीरिक और मानसिक क्षमताओं के साथ लोगों को श्रम करना सिखाया। इससे पूर्व लोग प्रकृति पर ही निर्भर थे। ऋषभदेव ने पहली दफा कृषि उपज को सिखाया। उन्होंने भाषा का सुव्यवस्थीकरण कर लिखने के उपकरण के साथ संख्याओं का आविष्कार किया। नगरों का निर्माण किया। नगर की स्थापत्य कला को नया रूप दिया तथा घरों को व्यवस्थित तरीके से बनाया जाने लगा, एक समाज को सुचारू रूप से चलाने के लिए जिन भी व्यवस्थाओं की आवश्यकता हुआ करती थी उन्होंने समाज में स्थापित की। बर्तन बनाना, स्थापत्य कला, शिल्प, संगीत, नृत्य और आत्मरक्षा के लिए शरीर को मजबूत करने के गुण सिखाए। साथ ही सामाजिक सुरक्षा और दंड संहिता को पहली बार भारतीय समाज से अवगत करवाया था। भगवान ऋषभदेव ने नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण बदलने का कार्य किया है। समस्त स्त्री जाति को भोग्या समझने वाले समाज को **'विवाह बंधन'** का ज्ञान देकर जनसंख्या नियोजन का सूत्रपात किया। तीर्थंकर ऋषभदेव अध्यात्म विद्या के भी जनक रहे हैं।

जैन भक्ति साहित्य में भगवान ऋषभदेव की भक्ति सर्वप्रथम की जाती है। उनकी भक्ति में स्वतंत्र रूप से काव्य, शास्त्र, पुराण, स्तोत्र, पूजाएं आदि बड़ी मात्रा में लिखे गए हैं। सातवीं शताब्दी में मुनिराज मानतुंग आचार्य ने भक्तामर स्तोत्र द्वारा उनकी महान महत्वशील स्तवन भक्ति की है,

आज यह संस्कृत का स्तोत्र श्रद्धालुओं का कण्ठाहार बना हुआ है। हजारों भक्तों को कण्ठस्थ है, अखण्ड पाठ हजारों लोग करते हैं। तीर्थंकर ऋषभदेव की प्रतिमाएं बड़ी संख्या में हैं, ऐसा कोई जिनालय नहीं होगा जहां इनकी प्रतिमा विराजमान न हों। खुदाई में अनेक प्राचीन प्रतिमाएं प्राप्त हुयी हैं। तीर्थंकर ऋषभदेव से सम्बद्ध अनेक तीर्थस्थल भी हैं जिनमें कैलाश पर्वत-अष्टापद, अयोध्या, हस्तिनापुर, बावनगजा-चूलगिरी, चांदखेड़ी, कुण्डलपुर (दमोह), ऋषभदेव केसरियाजी, मांगीतुंगी, माउन्ट आबू आदि अनेक तीर्थस्थल हैं।

तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की जीवन शैली, दर्शन एवं आर्दशों का प्रचार-प्रसार भारतीय युवा पीढ़ी के लिए और भी अधिक प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है।

प्रतिवर्ष चैत्रकृष्ण नवमी को ऋषभदेव जयंती जैन समुदाय में हर्ष, उल्लास के साथ श्रद्धा पूर्वक मनायी जाती है। जगह जगह धार्मिक अनुष्ठान, शोभायात्रा, अभिषेक, शांतिधारा, प्रवचन, व्याख्यानमाला व सांस्कृतिक आयोजन इस दिन होते हैं। उनकी जन्मभूमि अयोध्या में इस दिन विशेष आयोजन होता है। हाल ही में मध्यप्रदेश के दमोह जिला में स्थित ऋषभदेव भगवान की बड़े बाबा के नाम से प्रसिद्ध अति प्राचीन प्रतिमा के महामस्तकाभिषेक में आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के सान्निध्य में लाखों श्रद्धालुओं ने आस्था की डुबकी लगायी है।

भगवान ऋषभदेव ने मानव समाज को सभ्य और संपन्न बनाने में जो योगदान दिया है, उसके महत्व को सभी धर्मों के लोगों को समझने की आवश्यकता है।

सभी धर्मों में ऋषभदेव का उल्लेख है - आचार्य श्री अतिवीर जी मुनिराज

जैन दर्शन के प्रथम तीर्थंकर देवाधिदेव श्री ऋषभदेव भगवान ने तीसरे काल के अंत में निर्वाण पद की प्राप्ति कर समस्त सांसारिक बंधनों से मुक्ति प्राप्त की। शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या में राजा नाभिराय व माता मरुदेवी के आंगन में जन्म लेकर भगवान ऋषभदेव ने प्राणीमात्र का कल्याण किया। भारतवर्ष के स्वर्णिम इतिहास में जैन दर्शन का अमूल्य योगदान है। जब कल्पवृक्ष लुप्त होने लगे तो जनमानस को जीवनयापन की चिंता होने लगी। ऐसे समय में भगवान ऋषभदेव ने असि, मसि, कृषि, शिल्प, वाणिज्य व कला का अद्भुत ज्ञान प्रदान कर जीवन जीने की कला सिखाई। अपनी दोनों पुत्रियों ब्राह्मी व सुंदरी, को अंक व लिपि का ज्ञान देकर महिला सशक्तिकरण का एहसास लोगों को करवाया। इसी कारण ब्राह्मी लिपि नामकरण हुआ। आपने न्याय व नीति पूर्वक राज्य कर समस्त सांसरिक सुखों से वैराग्य धारण कर कर्मों की निर्जरा हेतु जैनेश्वरी दीक्षा अंगीकार की तथा वन की ओर प्रस्थान किया। आपके साथ हजारों अन्य राजाओं ने भी आपके मार्ग का अनुसरण किया। दीक्षा लेते ही आपने मौन धारण कर लिया।

आप अपने आत्मसाधना में निरंतर आरूढ़ रहे परन्तु आपकी कठिन चर्या से च्युत होकर अनेक राजाओं ने अन्य मार्ग को अपना लिया। जैन मुनि की आहारचर्या का किसी को भी ज्ञान न होने से आपको आहार नहीं मिला और फिर जब आप हस्तिनापुर नगरी पहुंचे तो वहां के राजा श्रेयांस को जातिस्मरण से आहारचर्या का ज्ञान हुआ और उन्होंने आपको नवधाभक्ति पूर्वक इक्षुरस का आहार करवाया। तभी से वह दिन अक्षय तृतीया के रूप में लोकप्रचलित हुआ जो आज भी जनमानस मना रहा है। कैवल्यज्ञान की उत्पत्ति के पश्चात आपके दिव्य समवशरण का नगर-नगर में मंगल विहार हुआ तथा आपकी दिव्यवाणी से ज्ञानपिपासुओं की क्षुधा शांत हुई। जीवन के अंतिम पड़ाव में आप कैलाश पर्वत के उच्च शिखर पर ध्यानस्थ हुए जहाँ से आप समस्त कर्मों की निर्जरा कर परम पद में सदा के लिए अवस्थित हो गए। यह कहना कोई अतिश्योक्ति न होगी कि आपने अपने आदर्श जीवन व सदुपदेशों से जीने व मरने की सम्यक कला का ज्ञान दिया। भगवान आदिनाथ के नाम से आपका उल्लेख लगभग सभी मान्यताओं के प्राचीन ग्रंथों में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है।

आपके ज्येष्ठ पुत्र चक्रवर्ती भरत ने भी छह खण्ड के राज्य को त्याग कर जैनेश्वरी दीक्षा अंगीकार की तथा कर्मों की निर्जरा कर मोक्ष प्राप्त किया। इन्हीं चक्रवर्ती भरत के नाम पर हमारे देश का नाम भारत पड़ा, जिसका उल्लेख विष्णु पुराण में भी मिलता है। हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू जी ने उड़ीसा स्थित खारवेल के शिलालेख पर "भरतस्य भारत" प्रशस्ति देख कर ही इस देश का संवैधानिक नाम भारत किया था। इज़राइल में भगवान ऋषभदेव के माता-पिता नाभिराय व मरुदेवी की पूजा अर्चना भक्तिपूर्वक की जाती है। आपके ही पुत्र बाहुबली ने कठोर तप कर सिद्धत्व की प्राप्ति की जिनकी 57 फ़ीट विशाल खड्गासन प्रतिमा कर्नाटक के श्रवणबेलगोला में उत्तुंग खड़ी है और विश्व को दिगंबरत्व का दिव्य सन्देश प्रदान कर रही है। प्रथम तीर्थंकर देवाधिदेव ऋषभदेव भगवान का जन्म कल्याणक दिवस जैन धर्मावलम्बियों के साथ-साथ समस्त देशवासियों के लिए हर्षोल्लास का प्रतीक है।

संकलन - समीर जैन (दिल्ली)

भगवान् महावीर होने का अर्थ

- डॉ. अरिहन्त कुमार जैन, बैंगलोर

कुण्डग्राम में गणनायक राजा सिद्धार्थ व महारानी प्रियकारिणी त्रिशला के घर में चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन बालक वर्धमान के रूप में उस पवित्र आत्मा ने जन्म लिया, जिन्हें वीर, अतिवीर, सन्मति और तीर्थंकर भगवान् महावीर नाम से भी जाना गया। ये केवल उनके जन्म से बड़े होने तक के नाम नहीं बल्कि उनकी क्रमशः उजागर होती चारित्रिक उपाधियाँ हैं, जिनसे उनके महान् व्यक्तित्व का परिचय होता है।

सामान्यतः महावीर शब्द को लोग बाहुबल से आँकते हैं। लेकिन तीर्थंकर महावीर के संदर्भ में 'महावीर' होना बाहुबल से केवल बाह्य संसार को जीतना नहीं वरन् स्वयं के आंतरिक संसार को जीतना है। क्योंकि शारीरिक बाहुबल शाश्वत नहीं, बल्कि सीमित होता है तथा समय और उम्र के साथ-साथ ढलता हुआ जन्म-मरण के चक्रव्यूह में झूलता रहता है जबकि आंतरिक (आत्मा का) संसार जीतने वाले को साधन की आवश्यकता ही नहीं होती, वो तो भेद-विज्ञान के माध्यम से देह और आत्मा में भेद करके देह को नश्वर और आत्मा को अजर-अमर मानकर, तप के माध्यम से समस्त कर्मों का नाश कर मोक्ष को प्राप्त करता है।

तीर्थंकर 'महावीर' होना, आत्मा में विकाररूप विद्यमान क्रोध-मान-माया-लोभ रूपी कषायों से अंतरयुद्ध लड़कर, सर्वप्रथम स्वयं पर विजय प्राप्त कर दया-करुणा-प्रेम और क्षमा को स्वयं में विकसित करना है। यह अहिंसक अंतरयुद्ध बिना वीतरागता के संभव नहीं। वीतरागता का अर्थ होता है समस्त राग-द्वेष/आसक्ति आदि का परित्याग। अतः विचार करने पर हम तीर्थंकर महावीर के महा+वीत+रागी होने को भी 'महावीर' कहने का आशय ग्रहण कर सकते हैं।

भगवान् महावीर भले ही जैनधर्म के २४वें तीर्थंकर हैं, परंतु महावीर के सार्वकालिक, सर्व कल्याणकारी, सर्वोदयी और शाश्वत सिद्धांत उन्हें जनधर्म का प्रणेता प्रस्तुत करते हैं। भगवान् महावीर ने हमें जीवन को वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक ढंग से जीने की कला सिखलाई, जिसका सर्वप्रथम प्रयोग उन्होंने स्वयं पर किया और अपने दिव्य अनुभवों को मानव कल्याण हेतु जन-जन तक जनभाषा 'प्राकृत' के माध्यम से पहुंचाया। वे जानते थे कि भाषा भावों की अभिव्यक्ति और ज्ञान-प्रचार का साधन है। अतः इसके लिए यदि जनसामान्य के बोलचाल की जनभाषा प्राकृत को माध्यम बनाया जाए तो अत्युत्तम होगा। इससे वे अपने आध्यात्मिक एवं तात्त्विक चिंतन से प्रसूत ज्ञान रुपी अमृत को बिना भेद-भाव के समाज के प्रत्येक वर्ग तक पहुंचा सकते हैं ताकि वे आत्मकल्याण के पथ पर अग्रसर बन सकें,

इसीलिए उन्होंने संस्कृत की अपेक्षा जनभाषा प्राकृत को ही अपने उपदेशों का माध्यम बनाया।

उन्होंने अनुसंधान किया की प्रारम्भिक तौर पर ऐसी कौन सी आदतें हैं जो मानव के व्यक्तित्व विकास में बाधक है। उन्होंने पाया कि सात ऐसी आदतें और पाँच ऐसे पाप हैं, जो मानव को सम्यक् पथ से भटका रहे हैं, वो हैं - जुआ, मांसाहार, मद्य(शराब आदि नशे का सेवन), वेश्यावृत्ति, शिकार, चोरी तथा परस्त्री सेवन - जिन्हें उन्होंने सप्त व्यसन के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि व्यसनी व्यक्ति के जीवन में धर्म नहीं उतर सकता, क्योंकि व्यसन धर्म का शत्रु है। व्यसन एक ऐसी बला है जो व्यक्ति की मानसिक पवित्रता को नष्ट कर उसकी सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक चेतना को विकृत कर देती है और हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील तथा परिग्रह जैसे पाँच पापों को परिणाम रूप जन्म देती है। इनसे बचाव हेतु भगवान् महावीर ने अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह – इन पाँच अणुव्रतों के माध्यम से मानव के संतुलित व्यक्तित्व विकास की नींव रखी।

"अहिंसा परमो धर्मः"- भगवान् महावीर के इस मूलमंत्र के कारण ही भारत को विश्वगुरु की संज्ञा प्राप्त थी। विश्वशांति का संदेश देता 'जियो और जीने दो' का उनका संदेश एक ऐसे जीवन दर्शन को प्रस्तुत करता है, जिसमें अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकांतवाद, स्याद्वाद आदि सिद्धान्त विभिन्न दृष्टिकोणों से स्वतः ही समाहित हो जाते है। उनके सभी सिद्धांत नैतिक मूल्यों को दर्शाते हैं। भगवान् महावीर की अहिंसा में 'भय' की कोई जगह नहीं, उनकी 'अहिंसा' हमें दया, प्रेम, करुणा सिखाती है तो 'अपरिग्रह' के द्वारा हमें अनावश्यक परिग्रह न करके अतिआवश्यक सीमित साधनों में संतोषपूर्वक जीवन यापन करने का संदेश मिलता है। वाद-विवाद से रहित सत्य के बहुआयामी दृष्टिकोण के चिंतन को विकसित करने वाले 'स्याद्वाद' और 'अनेकान्तवाद' हमारे भीतर सहनशीलता, परस्पर सौहार्द्र, सम भाव की भावना को प्रेरित करते है। किन्हीं भी सिद्धांतों में आग्रहवाद की गंध नहीं आती वरन् मैत्री, करुणा और सद्भाव की ख़ुशबू ही आती है। इनके अनुपालन से न केवल जीवों का मुक्ति का मार्ग ही प्रशस्त होता है वरन् सामान्य लोक जीवन भी सुन्दर हो जाता है।

वर्तमान में जहाँ आज पूरा विश्व कोरोना नामक सूक्ष्म विषाणु के संक्रमण से जूझ रहा है, जिसके आगे बड़े से बड़ा बाहुबल, बड़े से बड़े हथियार भी बौने साबित हो रहे हैं, जिसका एक मात्र बचाव सावधानी ही है।

आपकी इम्युनिटी पावर (प्रतिरोधक क्षमता) बढ़ाने की अपील की जा रही है । भौतिकता की आँधी में प्रकृति को दरकिनार कर मानसिक रूप से भी मशीन बन चुके हम लोगों के लिए कोरोना वाइरस एक सबक है। इससे पार पाने के लिए आध्यामिक एवं स्वस्थ्य जीवन शैली ही एकमात्र उपाय है, जो कि भगवान् महावीर के अहिंसा आदि सिद्धांतों को जीवन में अपनाकर तथा स्वयं के आंतरिक महावीर को जगाने से ही प्राप्त होगी। क्योंकि जब तक आत्मा स्वयं को अपूर्ण मानता रहेगा तब तक बाहरी पदार्थों से अपना हित-अहित मानता रहेगा।

भगवान् महावीर आत्मा की अनंत सामर्थ्य को उजागर करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार कोयले में हीरा तथा पत्थर की शिला में देव प्रतिमा स्वाभाविक रूप से ही विद्यमान है, उसी प्रकार इस आत्मा में भी परमात्मा बनने की सामर्थ्य सहज रूप से ही विद्यमान है, आवश्यकता केवल इस बात की है कि हम अपनी शक्ति को पहचानें और तदनुरूप आचरण करें। तात्पर्य यह है कि ज्ञान-दर्शन-सुख-बल आदि अनन्त सामर्थ्य से परिपूर्ण यह आत्मा यदि अपनी शक्ति को पहचान कर राग-द्वेष मोहादि विकारी वृत्तियों से मुक्त हो जाये तो यह भी 'महावीर' सदृश बनने की पात्रता प्राप्त कर सकेगा।

भगवान् महावीर की यह स्पष्ट अवधारणा है कि हमारा व्यक्तित्व मात्र कपड़ो या शारीरिक सौंदर्य से ही निर्मित नहीं होता; उसमें हमारा चिंतन, वाणी और व्यवहार तथा आध्यात्मिक दृष्टि भी महत्वपूर्ण घटक है, जो हमारे सही और सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करता है। वे कहते हैं कि यदि सफल जीवन जीना चाहते हो तो विचारों में 'अनेकांत', वाणी में 'स्याद्वाद', आचार में 'अहिंसा' और जीवन में 'अपरिग्रह' – इन चार सूत्रों को अपना जीवन आदर्श बना लो, जिनसे व्यक्ति के एक ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण हो सकता है, जो स्वयं उसके लिए तो कल्याणकारी होगा ही साथ ही वह परिवार, समाज, राष्ट्र तथा सम्पूर्ण विश्व के लिए भी कल्याणकारी होगा।

यदि हम तीर्थंकर महावीर के सिद्धांतों का गहराई अध्ययन करेंगे तो हमें वो अमूल्य सूत्र प्राप्त होंगे जिनसे मानव के व्यक्तित्व का निर्माण होता है । उन्होंने यह माना है कि व्यक्तित्व का आत्मिक विकास सर्वांगीण होना चाहिए। इसके लिए उन्होंने, सम्यक् दर्शन (सही दृष्टि), सम्यक् ज्ञान (सही ज्ञान/निष्ठा) और सम्यक् चरित्र (सही आचरण) – इन रत्नत्रय के माध्यम से व्यक्तित्व विकास की ऐसी नींव रखी, जिसे मानव के मौलिक विकास में सहायक माना गया। सर्वप्रथम व्यक्तित्व का सबसे बड़ा पहलु है कि आपकी दृष्टि कैसी है ? आपका दृष्टिकोण सही होना चाहिए। आपकी दृष्टि और विश्वास से आपकी आपके लक्ष्य के प्रति निष्ठा का पता चलता है। और उसी से निर्धारित होता है कि आपकी सफलता कितनी सुनिश्चित है । यही 'सम्यग्दर्शन' है। सही ज्ञान के अभाव में हम लक्ष्य से भटक सकते हैं। लक्ष्य के बारे में हमारे पास सही तथा प्रामाणिक सूचनाएं भी होनी चाहिए। इसीलिए 'सम्यक् ज्ञान' बहुत जरूरी है। सही विश्वास/निष्ठा/दृष्टि तथा सही ज्ञान भी हो गया, किन्तु महावीर कहते है कि अभी भी आप पूर्णता को प्राप्त नहीं कर पाए हैं। आप अपने लक्ष्य को तब तक नहीं प्राप्त कर सकते जब तक कि आप सही आचरण को प्राप्त नहीं कर लेते। पथ पर सही तरीके से चलना सही आचरण है। 'सम्यक् चारित्र' ही हमारे व्यक्तित्व का अंतिम सोपान है । अतः सम्यग्दर्शन,सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र के योग से ही हमारा मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा।

भगवान् महावीर के वैज्ञानिक एवं मानोवैज्ञानिक सिद्धान्त आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने पहले थे और भविष्य में भी अनंतकाल रहेंगे। उनके उपदेश मर्मस्पर्शी हैं, जिनमें जीवन की समस्याओं का समाधान निहित है। उनके 'अहिंसा' सिद्धान्त का अर्थ मात्र हिंसा करना नहीं बल्कि अन्तर्मन में प्रेम, करुणा, दया, क्षमा का उजागर होना है। वे कहते हैं जिस प्रकार 'अंधकार' को दूर करने के लिए हम 'प्रकाश' करते हैं तो अंधेरा स्वतः ही विलुप्त हो जाता है, उसी प्रकार अंधकार रूपी 'हिंसा' से पार पाने के लिए प्रकाश रूपी 'क्षमा' को अपनाया जाये तो 'अहिंसा' स्वतः ही प्रगट हो जाती है। 'क्षमा' के व्यापक स्वरूप को बतलाते हुए भगवान् महावीर कहते हैं कि -

"खामेमि सव्व जीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वैरं मज्झं न केणई"

'अर्थात् मैं सभी जीवमात्र के प्रति क्षमाभाव रखता हूँ, सभी जीव मेरे द्वारा जाने-अनजाने अपराधों को क्षमा करें। सभी जीवों के प्रति मेरा मैत्रीभाव है। मेरा किसी प्राणिमात्र से कोई वैर नहीं है'। इस भावना में 'वसुधैवकुटुम्बकम्" की उक्ति चरितार्थ होती है। यह मंत्र विश्वशांति के लिए प्रकाशस्तम्भ की तरह है। इस प्रकार भगवान् महावीर के सिद्धान्त मात्र सिद्धान्त नहीं अपितु यह प्रत्येक मानव के लिए एक आदर्श नागरिक संहिता है। यदि भगवान् महावीर की इन शिक्षाओं को हम व्यावहारिक जीवन में उतारेंगे तो निश्चित ही एक आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण कर सकते हैं।

महावीर की अहिंसा : दुनिया के लिए वरदान

- स्वराज जैन, दिल्ली

संसार रूपी गुलशन को हमेशा के लिए गुलज़ार रखने के लिए एक ही मंत्र है वो है - 'अहिंसा परमो धर्मः'। यह ऐसा मंत्र है जो इस जगत के प्रत्येक प्राणी को अपना विकास करने की आजादी देता है। यह मंत्र हमें श्रमण परम्परा से प्राप्त हुआ। यह इतिहास के लिए जितना लाभकारी रहा भविष्य के लिए उससे ज्यादा ही उपयोगी और हमें अस्तित्व को बनाये रखने की गारन्टी देता है। आज संसार में जैसा विकास हो रहा है वह विनाश के लिए भी तैयार हो रहा है। इस विनाश को अहिंसा से ही बचाया जा सकता है। जैन परम्परा के 24वें एवं अंतिम तीर्थंकर हैं भगवान महावीर। भगवान महावीर ने अपने हरेक अनुयायी को अहिंसा के साथ, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह के पाँच व्रतों का पालन करना आवश्यक बताया और इसी के साथ उन्होंने साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका इन चार तीर्थो की स्थापना की। इसलिए वे तीर्थंकर कहलाए। वैसे उन्हें वर्धमान, सन्मति, वीर अतिवीर के नाम से भी जाना जाता है। रूस-यूक्रेन युद्ध के चलते हुए लगभग एक माह से ज्यादा समय होने जा रहा है। रूस वांछित नतीजा हासिल नहीं कर पाया है और यूक्रेन सर्वनाश की तरफ बढ़ता जा रहा है। जैसे-जैसे समय बीत रहा है, अधिक विनाश एवं विध्वंस की संभावनाएं बढ़ती जा रही है। यूक्रेन और रूस में शांति प्रयास करने के लिए भगवान महावीर की अहिंसा को अमल में लाना चाहिए। ऐसे में भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जो अपने आध्यात्मिक तेज एवं अहिंसा की शक्ति से युद्ध की विभीषिका सामाप्त कर सकता है। इन दोनों देशों को युद्ध विराम के लिए राजी कर सकता है। भगवान महावीर की इसी अहिंसा के प्रचार-प्रसार से न केवल युद्ध की विभिषिका शांत हो सकती है बल्कि सम्पूर्ण विश्व में हिंसा का जो तांडव हो रहा है उसे भी रोकने व समाप्त करने में कामयाबी मिल सकती है। ऐसे में अहिंसा सबसे ताकतवर हथियार है, बशर्ते कि इसमें पूरी ईमानदारी बरती जाए। हिंसा, नक्सलवाद और आतंकवाद की स्थितियों ने जीवन में अस्थिरता एवं भय का माहौल व्याप्त कर रखा है। अहिंसा की इस पवित्र भारत भूमि में हिंसा का तांडव सोचनीय है। अहिंसा के अवतार भगवान महावीर के देश में हिंसा को अपने स्वार्थपूर्ति का हथियार बनाना गंभीर चिंता का विषय है। दमनकारी के खिलाफ वही सिर उठाकर खड़ा हो सकता है, जिसे कोई डर न हो, जो अहिंसक हो एवं मूल्यों के लिए प्रतिबद्ध हो। भगवान महावीर की अहिंसा ही ऐसे में सबसे कारगर हथियार है क्योंकि आज देश एवं दुनिया हिंसा एवं युद्ध के महाप्रलय से भयभीत और आतंकित है। जातीय उन्माद, सांप्रदायिक विद्वेष और जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं का अभाव ऐसे कारण हैं जो हिंसा को बढ़ावा दे रहे और हिंसा, युद्ध और आतंकवाद जैसी स्थितियाँ असंतुलित व्यक्ति के दिमाग से उत्पन्न होती है। व्यक्ति समाज और राष्ट्र में जीता है। समाज और राष्ट्र के प्रश्न पर युद्ध को नकारा नहीं जा सकता। राष्ट्रीय सुरक्षा हेतु युद्ध अनिवार्य हो सकता है, एक सामाजिक प्राणी उससे विमुख नहीं हो सकता, पर युद्ध में होने वाली हिंसा को अहिंसा की कोटि में नहीं रखा जा सकता। अनिवार्य हिंसा भी अहिंसा नहीं बन सकती है एक प्रश्न यह भी है कि मनुष्य कितना भी युद्ध करे, अतंतः उसे समझौते की टेबल पर आना ही होता है तो फिर पहले से ही समझौते की टेबल पर क्यों नहीं। आगम में कहा - **''सव्वे पाणा ण हंतव्वा, एस धम्मे धुए णिइए सासाए।''** किसी प्राणी से हिंसा न करना, यह अहिंसा धर्म ही सबसे अधिक पुराना है, ध्रुव, नित्य और शाश्वत है। भगवान महावीर के सिद्धांत को अपनी कविता के माध्यम से कहकर रामधारी सिंह दिनकर भी अमर हो गए, परन्तु अमर हुए किन कारणों से ... केवल भगवान महावीर के सिद्धांत को कविताबद्ध करने से। यह महानता है। भगवान के सिद्धांत की, जिसने उनके सिद्धांत को अपना लिया और जीवन में उतार लिया, वह अपना ही नहीं अपने परिवार एवं इष्ट मित्रों तक का कल्याण करने के लिए सक्षम अधिकारी बन जाता है। भगवान महावीर अहिंसा की अत्यंत सूक्ष्मता में गये थे। वे प्राणीमात्र ही नहीं वरन् प्रकृति के साथ खिलवाड़ के भी विरोधी थे। महावीर का कथन है कि पूर्ण अहिंसा व्रतधारी व्यक्ति सजीव वनस्पति का स्पर्श भी नहीं कर सकता। परम अहिंसक वह होता है जो संसार के सब जीवों के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेता है, इस आत्मतुला को जाननेवाला और इसका आचरण करनेवाला ही महावीर की परिभाषा में अहिंसक है। उनकी अहिंसा की परिभाषा में किसी प्राणी का प्राण-वियोजन करना ही हिंसा नहीं है, किसी के प्रति बुरा चिंतन करना भी हिंसा है। भगवान महावीर स्वामी ने अहिंसा का जितना सूक्ष्म विवेचन किया है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। महात्मा गाँधी ने अहिंसा के बल पर ही अपने देश को स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष किया, इससे बड़ा महावीर स्वामी के उपदेशों का प्रयोग और भला क्या हो सकता था और परिणाम आज दुनिया के सामने हैं, महात्मा गाँधी को भारत देश की न केवल मुद्रा पर छापा जाता है, वरन् उन्हें राष्ट्रपिता भी कहा जाता हैं। आज देश ही नहीं पूरी दुनिया बुरे दौर से गुजर रहीं है। एक और जहाँ हम आतंकवाद से पीड़ित हैं, वहीं प्रकृति के साथ छेड़छाड़ एवं जीवहत्या एवं मांसाहार के कारण नित नई महामारी दुनिया के सामने चुनौती बनकर खड़ी हो रही हैं। कोरोना जैसी विश्वव्यापी महामारी भी जीव हिंसा का ही परिणाम है, यदि जीव हिंसा न होती और महावीर स्वामी का सिद्धांत अहिंसा हरेक देश में अक्षरशः पालन किया जाता तो कोरोना तो क्या लोगों को सर्दी जुकाम तक भी नहीं होता, यह विशेषता है अहिंसा के सिद्धांत की। हम बड़े-बड़े बमों, आणविक शक्ति की स्थापना का सपना पाल बैठे हैं। मैं दृढ़ निश्चय से कह सकता हूँ विश्व को आतंकवाद जैसी बुराई और कोरोना, एड्स, कैंसर जैसी भयंकर महामारी पर काबू पाना है तो तीर्थंकर महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा एवं अनेकांत-स्याद्वाद के सिद्धांत को अपनाना होगा। तभी इन विश्वव्यापी समस्याओं का सार्थक हल निकल सकता है।

मानव संस्कृति के आदि संस्कर्त्ता भगवान आदिनाथ

विद्यारत्न (डॉ.) नरेन्द्रकुमार जैन, प्राचार्य, सनावद्

भारतीय दर्शनों में भोगभूमि और कर्मभूमि की चर्चा विस्तृत रूप में प्राचीन ग्रंथों में देखने को मिलती है। भारतीय संस्कृति में भी अलग-अलग तरह की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था देखने के लिए मिलती है। भगवान् ऋषभदेव स्वामी ने सर्वप्रथम हमें प्रकृति प्रदत्त संस्कृति से परिचय कराया था, अतः इन्हें आदि ब्रह्मा कहा जाता है। आदिनाथ स्वामी के जन्म से पूर्व मनुष्य का प्रकृति से परिचय नहीं था। भोगभूमि की अवस्था होने से कल्पवृक्षों के माध्यम से जीवनयापनकी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती थी। भोगभूमि में युगलिया जोड़े उत्पन्न होते थे और भोग-भोगकर मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे। नदी-नाले भी इस काल में नहीं दिखाई देते थे। जब भोगभूमि की अवस्था समाप्त होने को थी और कर्मभूमि का प्रादुर्भाव होने को था तब प्रकृति में व्यापक परिवर्तन हुए और अंतिम कुलकर राजा नाभिराय के समय में इच्छित फल देने वाले कल्पवृक्ष नष्ट हो गये। ऐसी विषम परिस्थिति में प्रजा जन राजा नाभिराय के पास पहुँचे और अपनी समस्या बताकर मार्गदर्शन चाहा। राजा नाभिराय ने उन्हें आदिब्रह्मा भगवान्ऋषभदेव के पास भेज दिया, जिन्होंने उन्हें भोगभूमि एवं कर्मभूमि की स्थिति बताकर जीविकोपार्जन की शिक्षा दी। प्रकृति के साथ किस तरह सामंजस्य बनाकर कार्य को आगे बढ़ाना है इसकी षटकर्मो अर्थात्असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, कला और शिल्प रूप शिक्षा दी। आपने बताया कि कर्म करना ही अब हमारी प्रकृति है अतः जो जैसा कर्म करेगा, वैसे फल की प्राप्ति होगी। आपने बताया कि प्रकृति का संरक्षण कैसे किया जाये? जो बीज हमें प्राकृतिक रूप से मिले हैं, उनका उपभोग जरूरी है लेकिन उनके संरक्षण के लिए कुछ बीजों का होना भी आवश्यक है ताकि आगे उनसे पुनः बीजोत्पत्ति (फसल उत्पत्ति) हो सके। जिसे हम कृषि कर्म कहते हैं। अतः कृषि करना हमारी संस्कृति का प्रमुख अंग है। किसानों का श्रम हमें बताता है कि बिना श्रम के कर्म भूमि में कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता। भूख मिटाने के लिए कृषि कार्य जरूरी है। भोजन के बिना कोई भी जीव जीवित नहीं रह सकता। अतः भगवान्आदिनाथ स्वामी ने कहा कि ऋषि बनो या कृषि करो। भगवान्ऋषभदेव के बताये षट्कर्मो में असि (तलवार चलाना, युद्ध कला) मसि (कलम चलाना, अक्षर ज्ञान), के बाद कृषि को कर्मभूमि में महत्त्व दिया। लोगों ने कृषि की लेकिन असमानता भी बढ़ी क्योंकि व्यक्ति को उसकी योग्यता,पुरुषार्थ से फल की प्राप्ति हुई। जब यह असमानता बढ़ी तब सर्वजन हितार्थ वसुधैव कुटुम्बकं की भावना पर जोर देकर दान तीर्थ की परम्परा विकसित हुई और भगवान्ऋषभदेव स्वामी ने तत्कालीन हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस के यहाँ कर्मभूमि का प्रथम आहारदान ग्रहण किया। इस तरह आहारदान के जनक के रूप में हम भगवान्आदिनाथ स्वामी को स्मरण करते हैं। यह आहारदान भारतीय संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण अंग बना।

भारतीय संस्कृति में त्याग की महत्ता है। इस त्याग की भावना जैनधर्म में जितनी ज्यादा मिलती है वह अन्यत्र दुर्लभ है। भूखे को रोटी दो,प्यासे की प्यास बुझाओ। इस कथन में श्रेष्ठ और उच्च स्तर की भावना समाहित है। जैनधर्म में औषधि, ज्ञान (शास्त्र), अभय और आहार दान की परम्परा है। आज मानव समाज को इन्हीं की आवश्यकता भी है। मानव समाज को उन भावनाओं के साथ हिलमिलकर रहना चाहिए, जिसकी शिक्षा भगवान्आदिनाथ स्वामी ने सर्वप्रथम कर्मभूमि के आरंभ होने के साथ दी थी। अतः वे प्रथम शिक्षक तथा मानव संस्कृति के आदि संस्कार कर्त्ता बने। यही हमारी भारतीय संस्कृति कहलाई।

जहाँ यह संस्कृति फलफूल रही थी, धीरे-धीरे इसमें मिथ्यावादियों द्वारा दूषण भी लगने लगे। जैसे बीज बोने के उपरांत फसल उत्पन्न होती है लेकिन साथ ही खरपतवार भी उग आती है। अतः खरपतवार को नष्ट कर फसल का संरक्षण जरूरी है। जैन संस्कृति कहती है कि भोजन ग्रहण करना प्रकृति है, बिना भूख के भोजन ग्रहण करना विकृति है, भोजन को छीनकर खाना दुःष्कृति है एवं दूसरे को भोजन दान करना संस्कृति है। आज आवश्यकता इसी संस्कृति के संरक्षण की है। परम पूज्य संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज संस्कृति संरक्षण के लिए सजग हैं अतः उन्होंने लोगों को परम्परागत ढंग से खेती के विकास तथा पशुधन के संरक्षण हेतु लोगों को सजग करना आरंभ कर दिया है। आपने पशुहत्या की ओर लोगों का ध्यान खींचते हुए बताया कि जब गाय, बैल जैसे खेती के लिए उपयुक्त पशुओं का विनाश हो जायेगा तो खेती की व्यवस्था ही गड़बड़ा जायेगी। अतः आवश्यक है कि जैन समाज पशुओं के संरक्षण के प्रति जन जागरण अभियान चलाकर लोगों को इनके बध से होने वाली हानियों से अवगत कराकर "अहिंसा धर्म" के पालन हेतु एक छोटा सा कदम उठाये ताकि पशुओं का संरक्षण हो सके। पशु संरक्षण हमारी संस्कृति का संरक्षण है, ऐसा जानकर कार्य करें।

श्रेष्ठ वही है जिसमें दृढ़ता हो, पर जिद नहीं
वाणी हो पर कट नहीं,
दया हो पर कमजोरी नहीं,
ज्ञान हो पर अहंकार नहीं।
पहाड़ पर चढ़ना है तो झुककर चढ़ो
ऊँचाई बिना झुके नहीं मिलती।

तीर्थंकर आदिनाथ ने अहंकारहीनता का सन्देश दिया। तप और त्याग की संस्कृति तीर्थंकर आदिनाथ की देन है।

धर्म, संस्कृति और साधना के अन्वेषक : आचार्य श्री विद्यानंद जी महाराज

- डॉ. राजेंद्र कुमार बंसल, बुढ़ार

सन २००८ पर्युषण पर्व में मैं श्री हिराचंद नेमचंद दोशी जैन बोर्डिंग पूना के जैन मंदिर में प्रवचन करने गया था । वहाँ उच्च शिक्षा में अध्ययनरत २५० छात्र एवं स्थानीय समाज के महानुभाव तीन समय प्रवचन सुनने आते थे। नव पीढ़ी के अनुरूप धार्मिक सिद्धांतों की व्याख्या एवं भावपूर्ण धार्मिक क्रिया करने की प्रायोगिक विधि ने सभी को आकर्षित किया। वातावरण बहुत ही प्रेरक और आह्लादकारी था । धर्म मंगल की विदुषी संपादिका श्रीमती लीलवती ने एक दिन भोजन हेतु निमंत्रण दिया। उनका जैन साहित्य का अच्छा संग्रह है। उन्होंने विश्व धर्म की रूपरेखा नामक पुस्तक मुझे दी और कहा कि आजकल उस पुस्तक के आधार पर आलेख प्रकाशित हो रहे हैं। पुस्तक को मैंने देखा क्षु.श्री पार्श्वकीर्ति वर्णीकृत इस पुस्तक में जैन धर्म के साथ-साथ अन्य धर्मों के महापुरुषों के व्यक्तित्व और कर्तव्य का शोध खोज पूर्ण सन्दर्भ वर्णन है । मैंने पुस्तक के प्रकाशक श्री श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी सेबादल कुन्दकुन्द नगर, तमिलनाडु को पत्र लिखकर पुस्तक मंगवायी और उनसे क्षु.श्री पार्श्वकीर्ति वर्णी जी के बारे में जानकारी मंगवाई। पुस्तक आ गयी किन्तु लेखक के बारे में जानकारी नहीं मिली। इसी बीच ग्वालियर में विराजित मुनि श्री आर्जव सागर जी महाराज के दर्शन करने का सौभाग्य मिला। आपका दक्षिणभारत से गहरा सम्बन्ध रहा। मैंने उनसे क्षु.श्री पार्श्वकीर्ति जी के बारे में पूछा किन्तु समाधान नहीं मिला। श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी मुंबई द्वारा तिजारा में आयोजित संवाद २००९ में उपस्थिति अंकित कराकर मैं कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली में रुका और पूज्य आचार्य श्री विद्यानंद मुनिराज के दर्शन कर मैंने उनसे विश्वधर्म की रूपरेखा पुस्तक की उपादेयता की चर्चा की और उसके लेखक को जानने के प्रति अपनी जिज्ञासा भी दर्शाई। मैं आश्चर्य में पड़ गया, जब यह ज्ञात हुआ कि उक्त पुस्तक के लेखक स्वयं आचार्य श्री हैं। मैं उनकी श्रम साधना, खोज प्रकृति और इतिहास, कला, पुरातत्व प्राकृत भाषा आदि की धरोहर को प्रकाश में लाने की रुचि और उपलब्धियाँ देखकर नतमस्तक हुआ। जो कार्य विद्वान मनीषियों, शोधार्थियों को करना चाहिए वह कार्य पूज्य आचार्य श्री अपनी आत्मसाधना के साथ-साथ स्व प्रेरणा से करते हैं और शोधार्थियों को प्रोत्साहित भी करते हैं। अद्भुत दूरदृष्टि है आपकी। आपकी सूक्ष्म अन्वेषण दृष्टि से निरंतर स्वाध्याय की प्रवृत्ति से अनेक ऐतिहासिक तथ्य प्रकाश में आये जो जैन संस्कृति और समाज को महिमामंडित करता है। आपके पूर्व अनुभवों से ज्ञात हुआ कि आपकी यह अन्तरंग धारणा है कि **इतिहास का निर्माण वही कर सकते हैं, जिन्हें अपनी ऐतिहासिक विरासत का ज्ञान और बहुमान हो।** जिस प्रकार कर्मक्षेत्र में शूरवीर होने वाले महापुरुष ही धर्मक्षेत्र में शूरवीर होते हैं उसी प्रकार वैसे ही अपने संस्कृति और साहित्य के प्रति अन्वेषण की दृष्टि रखने वाले अपनी आत्मा की खोज कर सकते है। देह-देवालय में विराजित मनोविकारों से आवृत्त, विषय भोगों में उन्मुक्त आत्मा की पहचान और परमात्म स्वरूप के दर्शन करने का पुरुषार्थ क्रिया के दंभ या आगम की जानकारी की प्रवीणता मात्र से संभव नहीं है। उसके लिए आत्माभिरुचि पूर्ण एकाग्रता की साधना भी आवश्यक है। अपनी संस्कृति साहित्य और उनके निर्माताओं के प्रति बहुमान होने पर हम उसके अध्येता, प्रस्तोता और अनुचरी हो सकते हैं।

आचार्य विद्यानंद मुनिराज ने अपनी ७५ वर्षीय श्रमण जीवन यात्रा में अनेक ऐतिहासिक कार्य सहजता से संपन्न किये। अनेक नए तथ्यों का अन्वेषण किया । कठिन से कठिन दार्शनिक रहस्यों की सहजग्राहा बनाकर उनका प्रतिपादन किया। पूर्ण सत्य को समझने, सत्य के अंशो को जानने की भी रुचि आवश्यक है। आप जैन धर्म के आगम-आध्यात्मिक शास्त्रों के ज्ञाता तो हैं ही इतर धर्मों के ग्रंथों का तुलनात्मक रूप से अध्ययन कर साधना-मार्ग की पुष्टि करते हैं । अध्ययन के साथ-साथ ही आप महत्वपूर्ण अंश को डायरियों में अंकित करते हैं। आचार्य श्री की अनेक डायरियां हैं, जो शोधार्थियों के लिए अमूल्य निधि सिद्ध हो सकती है, यदि उनका प्रकाशन करवा दिया जाये । आचार्यश्री आगम, आध्यात्म और इतर धर्मों के ज्ञान के जीवंत कोष हैं । आपके मंगल सानिध्य के चंद क्षणों में श्रोता भावविभोर और कृतज्ञ हुए बिना नहीं रहते। कृतज्ञता से मानवीय संवेदनाएं व्यापक और लोकोपकारी होती हैं। उपकारी के प्रति कृतज्ञता के भाव से जीवन में उदारता एवं पवित्रता की अनुभूति होती है। कृतघ्न-संवेदनहीन व्यक्ति कभी भी धार्मिक नहीं हो सकता। ऐसे निर्मम व्यक्ति के मन में प्रशम, संवेग आदि के भाव उत्पन्न नहीं होते।

अ.भा.दि. जैन परिषद के कार्य से मैं दिल्ली गया था, भाई श्री अनिल जैन के माध्यम से मैंने दोपहर में पूज्य श्री के दर्शन करने की भावना व्यक्त की। आप उस समय ग्रीनपार्क मंदिरजी में विराजित थे। जब मैं दर्शन करने गया आपने

मुझे महाकवि कल्हण विरचित राजतरंगिनी के पृष्ठ ८ और ४६५ दिखाए और कहा कि कश्मीर के श्रीनगर की स्थापना जैन धर्मावलम्बी राजा शकुनी के प्रपौत्र एवं सत्यप्रतिज्ञ अशोक ने की। उसने वहाँ अनेक स्तूप और जैन मंदिरों का निर्माण किया (अ.१/१०१-१०४) पूज्यश्री ने राजतरंगिनी की एक प्रति मुझे दी और अध्ययन करने की प्रेरणा दी। राजतरंगिनी में श्रीनगर की स्थापना के वर्णन के आधार पर लेखक ने जम्मू-कश्मीर की मुख्यमंत्री जी से अनुरोध किया है कि श्रीनगर की स्थापना की स्मृति में महावीर जयंती के दिन श्रीनगर महोत्सव मनाया जाये । खंडगिरी-उदयगिरी स्थित सम्राट खारबेल के शिलालेख और उसके जीवन-कर्तव्य के प्रति पूज्य श्री को बहुत बहुमान है। कुन्दकुन्द भारती में खारवेल के नाम का एक विशाल ग्रंथालय शोधार्थियों के लिए आपके मंगल आशीर्वाद से स्थापित किया गया है । बाहुबली की राजधानी (तक्षशिला) के जैन भग्नावशेषों का प्रकाशन भी आपकी अन्वेषण प्रवृत्ति का सुफल है।

पूज्य आचार्य श्री विसंवाद या विरोध वृत्ति को उचित नहीं मानते। यह हताशा और अयथार्थ कथन की दुखद परिणति समझते हैं। धर्म के क्षेत्र में ऐसी प्रवृत्ति सर्वथा अनुचित और असंगत मानते हैं। अपने से भिन्न विचार-रखने वालों की सत्ता को स्वीकार करना विशाल चिंतन का प्रतीक है। आपका मानना है कि अपने प्रतिपादन की रेखा पुष्ट और विशाल बनाओ। क्षीर्ण, छोटी रेखाएं स्वतः प्रभाव हीन हो जायेगी। भगवान महावीर की जन्मभूमि वासोकुण्ड वैशाली की पुष्टि और वहाँ निर्माणधीन विशाल भव्य स्मारक के सम्बन्ध में अपना मंगल आशीर्वाद देते समय आपने यही उपदेश दिया और कहा कि असत्य कितना ही योजनाबद्ध और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत क्यों न किया गया हो, अंततः असत्य का सत्य अनावृत होगा और असत्याचार की मनोवृत्ति स्वतः पराभव को प्राप्त होगी। कर्म सिद्धांत की प्राकृत व्यवस्था कृत्रिम बाह्य प्रदर्शन, प्रलोभन या राज्य संरक्षण के बनावटी प्रदर्शन से प्रभावित नहीं होती। लेखक ने अनुभव किया कि पूज्य श्री का सकारात्मक सोच जीवन की सफलता के साथ सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक संरक्षण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण आदेश हैं, जिसका सुफल अल्पकाल में ही प्राप्त होता है । धर्म जीवन में अनुभूत होना चाहिए। यह तभी संभव है जब दृष्टि में समता, अविरोध भाव या सुसंवाद का भाव हो। कुटिलता, मायाचार से संस्कृति विकृत होती है।

आ. विद्यानंद मुनिराज का व्यक्तित्व और सोच बहुत ही विराट है। आपकी साधना का लक्ष्य वीतरागता और वीतराग पथ के पथिकों के प्रति सहज धर्मानुराग है। शुद्धात्मा की प्राप्ति हेतु समयसार की अनेक वाचनाएँ आपके मंगल आशीर्वाद से हुई। उनमें शुद्धात्मा के प्रति गूढ़ चर्चाएँ भी डॉ. हुकुमचंद भारिल्ल के माध्यम से आपके मंगल सानिध्य में हुई। उसमें आप श्री की अपनी आध्यात्म की गहरी पकड़ सहज ही अनुभूत हुई। उससे उन विचारकों का दंभ स्वतः स्खलित हो गया जो चर्चा मात्र को 'समयसार' समझते हैं और उन्हें स्वच्छंदी आचरण करते हैं। धार्मिक मर्यादाओं और भावपूर्ण धार्मिक क्रियाओं के साथ वैराग्य-भावना युक्त जीवन जीने को कला की उपेक्षा नहीं की जा सकती और न ही धार्मिकों का अपमान या विराधना।

जैन धर्म में वीतरागता की प्राप्ति हेतु पंचपरमेष्ठी ही पूज्य और आराध्य हैं। वीतरागता के अव्रती पथिक / आराधक, रक्षक सभी का निषेध या तिरस्कार जैन संस्कृति के प्रतिकूल कार्य है। सम्यग्दर्शन प्राप्त करने वाले भव्य जीव होना ही चाहिए। सम्यग्दर्शन प्राप्त करने वाले भव्य जीव के बाह्याचार में मैत्री, प्रमोद करुणा और माध्यस्थ भाव होना ही चाहिए। सम्यगदृष्टि का जीवन तो इन गुणों से भावित होता है। आचार्यश्री अंतरचेतना में यह महानगुण विद्यमान है। इसी कारण जातिपंथ के भेद विस्मृत कर सभी वर्ग / आस्था के महानुभाव आपका आशीर्वाद प्राप्त करने उत्सुक रहते हैं।

तुलनात्मक अध्ययन से उद्भूत सत्य के सत्यापन एवं पुष्टि में आपकी दृष्टि अत्यंत व्यापक है। समयसार की चर्चा करते समय आप श्री ने बताया कि गीता अध्याय तीन श्लोक १७ में वही कथन किया गया है जो आचार्य कुंदकुंद देव ने गाथा २०६ में किया है। इस प्रकार की खोज और दृष्टि से आप श्री समयसार को उन तक पहुंचा देते हैं, जो इससे अपरिचित होते हैं। ऐसी विलक्षण प्रतिभा एवं परम्पराओं की मर्यादा के पक्षधर हैं। जिन मंदिर की पहिचान / नामकरण जिनेन्द्र देव से ही होना चाहिए। अन्य किसी नाम से नहीं। यह उनका मत है। जिनेन्द्र देव के भावपूर्वक नाम स्मरण, दर्शन और भक्ति से कर्म कालिमा उपशमित होती है और भेद विज्ञान की प्राप्ति होती है।

कुछ शब्दों में गहन अर्थ को हृदयग्राही बना देना आपकी गहन साधना का सूचक है। आपकी दृष्टि बहुत विशाल, व्यापक और दूरदर्शिता पूर्ण है। आप गुणग्राही और गुणों को उन्मुक्त हृदय से सम्मानित / प्रतिष्ठित करते हैं। आपके व्यक्तित्व और गुणों का अंकन शब्दसीमा के बाहर है। यह तो मात्र श्रृद्धा ही है जो असीम की ससीम बना देती है।

आपकी अन्तः स्फूर्ति प्रेरणा से लेखक ने वसोकुण्ड का लोक सर्वेक्षण कर वहाँ के लोकगीतों, कुलगीतों, विवाह की परम्पराओं, नारी सम्मान, ब्रह्मचर्य, अनुमति त्याग और अहल्ल भूमि आदि जैन विरासत के आधार पर अकाट्य रूप से सिद्ध किया कि वासोकुण्ड – वैशाली ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है । वहाँ ०४/११/२००४ को दिगम्बर जैन मंदिर का शिलान्यास हुआ । दिगम्बर १६/०४/२०११ को वेदी पर भगवान महावीर की विशाल पद्मासन मूर्ति विराजित की गयी और लेखक की कृति 'वैशाली के गणनायक महावीर' का लोकार्पण हुआ। सन २०१३ में पूज्य ऐलाचार्य श्री श्रुत सागर जी (अब आचार्य) के मंगल सानिध्य में वासोकुण्ड-वैशाली में भव्य पंच कल्याणक महोत्सव संपन्न हुआ।

परमपूज्य आचार्य श्री की प्रेरणा से लेखक ने संसदीय संग्रहालय नई दिल्ली में वैशाली के सचित्र प्रदर्शित करवाए साथ ही एन.सी.ई.आर.टी. सहित प्राप्त पाठ्य पुस्तकों में सुधार करवाकर भ्रांत धारणाओं को दूर किया।

धर्म-संस्कृति के उन्नायक के पूज्य आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज ने दिनांक २२/०९/२०१९ को समाधि पूर्वक देह त्यागी। सिद्धालय के अगले सोपान पर आरूढ़ हुए। उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित है।

पूज्य आचार्य श्री का अवतरण दिनांक २२/०४/१९२५ को हुआ था। उनकी ९८ वीं जन्म जयंती के अवसर पर उन्हें सविनय नमन करता हूँ। उनका बहुआयामी व्यक्तित्व सभी का प्रेरणा स्रोत बने, यही भावना है।

Jainism in Pandya Country

- DC.C.Saiithalingam, Mangalore

Settipodavu

On the south east of this hill, a natural cavern is found at about 20ft height. This is now locally called as Settipodavu. On the face of the rock one big Thirthankara figure is carved in sitting posture with all its usual parafurnalia. It is seated in arthapariyanka asana on a seat carried by three lions and looks like a local Chettiar (Money lender). So the local people named this cave as Settipodavu. Podavu, the Tamil word means an opening or hole. The wide opening of the natural cavern is named as pudavu.

Ceiling of the cave (Podava) is also neatly dressed and on the southern side wall five images are carved as bas relief under which five Inscriptions also engraved which furnish the names of the donors of these sculptures.

The Thirthankara is facing west, seated ona royal seat by the sides of whicht two makaras are standing and below three lions are shown. So it can be named as Shimhasanam. Two yakshas are standing onc on each side with fly wisks. Head of the figure is adorned with triple umbrella and it is surrounded by the prabhamantala with flames. Surya and Chandra are shown as flying on the sky above his head and above that branches of pipal tree with curled foliages are found. The face of the figure is very calm and compassion with charm. The record engraved below this figure in

Vatteluthu reads as.

1. Venbunattu Kurandi Thirukkattam palli Kanakananthi
2. Patarar Abinantha padarar avar manakkar Arimantala padarar
3: Abinanthana padarar ceyviththa thirumeni'

It means, this thirthankara image was made by one Abinanathanapadara who was a student of Arimantalapadara who was a student of Kanakananthi padarar of Kurandi Thirukkattampalli, situated in Venbu nadu. The date of the inscriptions can be assessed to 8-9CCE.

Among Five images carved on the ceiling of the cave (podavu) the middle three are Thirthankara figures and the first and last figures are named as Korrariya and Ambika Yakshi. The three seated thirthankara images are uniform in decoration and arthapaniynka asana with two yakshas standing one each side by side.

Two Kandarvas are flying in the sky above the only one figure of Thirthankaras.The first figure, named Korrariya, is seated on a lion with bow and arrow, as fighting against a demon seated on an elephant. It can be equated with the kali goddess worshiped in

Mahavira Settipodavu 10th CE

Hindu pantheon.

The last (5th) figure on the right side, is a lady seated in suhasana, (ie) the left leg is bent and placed on the pedestal and the right leg is hanging below freely. Her head is adored with Karanta makuta, her right hand is holding a Mower where as her left hand is placed on the thigh. Two attendant ladies are standing one on each side, This lady figure is named as Ambika Yakshi. The inscriptions engraved below cach figure are all in vatteluthu character and belong to 8-9CCE. The first record reads as,

1. Swasti Sri Ippalli Udaiya Gu
2. nasena Devar Sattan Deiva
3. Bala Devar Seyvichcha Thirumeni

It means, this Thirthankara figure was made by one Deiva Bala devan who was the student of Gunaseva Devar the head (possessor) of this jain school. Gunasena Devar mentioned in this record was none other than the same one mentioned in same record at Pechchi pallam.

The next inscription reads as,

1. Swasti Sri Venbu nattu kurandi

Jain Sculpture - Kuppalnaththam 10th CE

2. th thirukkattam pallik
3. Guna sena Devar manakkar Va
4. rthamana pandithar manak
5. Kar Gunasenap periya
6. dikal seyviththa thi
7. rumeni

In this inscription one Guna Seva devar is mentioned as head of Kurandi thirukkattampalli jain school. This figure was made by the third generation student Gunaseva periyadikal who was the student of Varthamanapandithar (the second generation) who was the student of Gunaseva Devar;

The another record reads as,

1. Swasti sri Ippalli al
2. kira Gunaseva Devar Sattan
3. Anthalaiyan Kalakkudi Thannai
4. chcharthi Seyviththa thiru
5. meni

This record reveals, this thirthankara image was made by Anthalaiyan a student of Gunasena Devar who the head of Jaina school which functioned at this hill itself. From these records we come to know that this hill had Served as a residential school and it had wide contact with Kurandi School and with Mulasanga functioned at Sravana Bela Kola.

Vadukapatti alias Manasiddhanallur

Vadukapatti village is located at 20Km distance on the Madurai-Dindigal main road. During the 9-10CCE this place had served as a Jain centre as well as a commercial centre. Two stone inscriptions are discovered here by the officers of the Archaeology department and are now displayed in the Thirumalai Naicker Mahal Museum at Madurai. One of the inscribed Slabs, has a jaina ascetic carved as bas- relief in standing posture and a small inscription is engraved by the side of the figure in Vatteluthu character. Head of the ascetic is adorned with a single umbrella his head is totally shaved and his two hands are hanging erect upto the thigh. The ascetic is shown in complete nudity. The record en graved by his side reads as,

1. Swasti Sri Malaikkulam irankal nee
2. kkiya Sri Varthamana Devar'

According to the palaeography of the record and the style of the sculpture it can be dated to 9-10CCE. The second inscription was also found at the same mound on a four sided pillar and on four sides the inscription was engraved in Tamil script. This record has 18lines but still left incomplete.

This inscription mentions the name of the village Malaikulam alias Mana siddha nallur and it was included in Pakanur kurram (near Cholavanthan). From this inscription it is learnt that during 9-10" CCE, in this village one water tank and a feeding center were established by the merchantile guilds. Some arrangements were made for the protection of this feeding centre and for the regular functioning of it. Merchantile guilds such as peru Niraviyar, Thisai Ayiraththavar and the individual Peruvariyan Vemban Vayiri arukai (cloth) merchant Manicka Kuththan, Thisai variyan Vira Cholan Kattanai Raman, Achchaviran etc have taken responsibility for the regular functioning of the feeding centre.

This village Vadugapatti is not the original name but Malaikulam

..... शेष पृष्ठ 23 पर

चन्दनबाला की पड़गाहन के समय स्थिति

डॉ. रमेशचन्द्र जैन, मुरार (ग्वालियर)

एक बार चंदना कुमारी अपनी सहेलियों के साथ नगर के बाहर उद्यान में क्रीडा कर रही थी। तभी उसके यौवन एवं सुन्दरता पर मोहित होकर एक विद्याधर ने उस का अपहरण कर लिया। पश्चात अपनी पत्नी के भय से चंदना को उसने कौशाम्बी के वन में छोड़ दिया। वन में भीलों के सरदार ने उसे पकड़ कर एक वैश्या को सौंप दिया। चन्दनवाला की सुन्दरता को देख वह वैश्या सोच रही थी कि इसे रूप के बाजार में बेचकर मुझे बहुत सारा धन प्राप्त हो जायेगा।

वाह रे! अशुभ कर्म, जहाँ महारानी मृगावती चन्दनवाला की बहिन है, उस कौशाम्बी में महावीर की मौसी एक दासी के रूप में बिक रही है।

परन्तु शुभ कर्म के योग से नगर के एक सज्जन सेठ ने बहुत धन देकर चन्दनवाला को लेकर अपने घर ले गये। उसे अनुमान और अपने अनुभव से उच्च कुल की कन्या जान कर अपनी "धर्मपुत्री" के रूप में स्वीकार कर लिया। चिंतन कर रहा था सेठ जैनधर्म से रहित चक्रवर्ती पद भी अच्छा नहीं है, भले ही दासीपना हो परन्तु जैन धर्म में वास हो वह अच्छा है।

फिर भी कर्मोदय में कौशाम्बी नगरी की महारानी मृगावती की लाड़ली बहिन और महावीर की मौसी दासी बनी हुई है, तथापि इसमें भी किसी पुण्य का ही योग्य है, कि दासीपना भी सेठ वृषभ दत्त जैसे एक सज्जन –धर्मात्मा के घर में मिला है, जहाँ शील धर्म की रक्षा हो।

चंदना की सुन्दरता देख सेठानी को संदेह हुआ, कि मेरी कोई संतान न होने से सेठ अवश्य मुझे छोड़कर इस चंदना को मेरी सौत बनायेगें।

एक दिन सेठ वृषभदत्त बाहर से थकेहारे घर आये। सेठानी कहीं बाहर गयी थी। कोई नौकर चाकर भी उस समय घर में नहीं थे, तो चन्दना पानी ले आयी और पिता समान सेठजी के पाँव धोने लगी, तभी उसके केशों का जूडा खुल गया, सेठ ने वात्सल्य पूर्वक पुत्री के केश हाथ से ऊपर उठा लिए। तभी सेठानी सुभद्रा आ गयी और चंदना के सुन्दर केश सेठ के हाथ में देख-कर आग बबूला हो गयी। शंका निर्णय में बदल गयी और चंदना को घर से निकालने की योजना बनाने लगी।

विभिन्न प्रकार से सेठानी चंदना को अपमानित करने लगी। एक दिन सेठ जब नगर से बाहर गए हुए थे, तब सेठानी ने चंदना को एकांत में बुलाकर उसके सुन्दर केश काटकर सर मुंडवा दिया। इतने पर भी क्रोध शांत नहीं हुआ तो चंदना के हाथ –पाँव में बेड़ियाँ डालकर उसे एक अँधेरी कोठरी में बंद कर दिया और तरह-तरह के कटु वचन कहे। चंदना को विश्वास था कि मेरे महावीर मुझे इस संकट से उबारने अवश्य आयेंगें। मुझे जिन महावीर ने सम्यक्त्व देकर भव-बंधन से मुक्त किया है वे प्रभु मुझे दर्शन देकर इन बेड़ियों से भी अवश्य छुड़ायेंगे।

इस प्रकार चिंतन करते तीन दिन बीत गये। चौथे दिन प्रातः काल सेठ आ गये। सेठ को चंदना कहीं दिखाई नहीं दी। पूछने पर भी किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया। सेठानी ने भी कुछ नहीं बताया। एक दासी का संकेत पाकर सेठ कोठरी की ओर गये। कोठरी का दरवाजा खोला। चंदना को देखकर करुण चीत्कार कर उठे अरे बेटी चंदना! तेरी यह दशा। फिर भी चंदना के मुख से आह तक न निकली। चंदना तीन-दिन की उपासी थी, मन में संकल्प कर लिया-यदि महावीर प्रभु पधारें तो मैं उन्हें आहार देकर ही पारणा करूँगीं। किसी जीव की भावना सच्ची हो तो उसका फल भी बिना मिले नहीं रहता। यदि जीव के शुभ-अशुभ या शुद्ध भावों का फल न हो तो संसार की चार गतियाँ और सिद्धगति ही नहीं रहेगी, फिर जगत को शून्य हो जाना पड़ेगा, परन्तु ऐसा है नहीं। सच्ची भावना का सच्चा फल आता ही है, भावना फलित हुए बिना नहीं रहती। तभी तो चंदना की आहारदान की भावना के फल स्वरुप प्रभु महावीर पधारे।

पांच माह पच्चीस दिन के उपवासी प्रभु महावीर आहार हेतु नगर में पधारे हैं। शरीर उनका दुर्बल नहीं हुआ, बल्कि तप के दिव्य तेज से उनकी मुद्रा चमक रही है। ऐसे वीर प्रभु वृषभदत्त सेठ के घर की ओर आ रहे हैं। चंदना ने प्रभु को अपने घर की ओर आते देखा तो उसका रोम-रोम भक्ति तथा आश्चर्य से पुलकित हो उठा। "पधारो प्रभु पधारो" प्रभु पास आये तो चंदना प्रभु का सत्कार करने के लिए आगे बढ़ी। उसकी बेड़ियाँ खुल गयीं, उसका रूप और सौन्दर्य पुनः झलक उठा, सुन्दर केश भी सुशोभित हो रहे थे।

भा रही थी भावना, आहार देने के लिए
बेड़ियाँ भी खुल गईं, आहार देने के लिए।

वातावरण ही बदल गया था। आनंद पूर्वक चंदना द्वार पर आयी, प्रभु की पूर्ण भक्ति के साथ वंदना करके पड़गाहन किया– अहो प्रभु पधारो, ..पधारो, पधारो।

प्रभु की दृष्टि चंदना पर पड़ी वह कृतार्थ हो गई, सोच रही थी "भले लोग मुझे नहीं पहचानते परन्तु मेरे प्रभु महावीर तो जानते हैं"। प्रभु दर्शनों से जीवन के सारे दुःख भूल गयी थी वह। भक्ति पूर्वक मुनिराज को आहार हेतु आमंत्रित किया। तीन-दिन की उपवासी चंदना के हाथ से १७५ दिन के उपवासी तीर्थंकर मुनिराज ने आहार लिया।

चंदना ने प्रभु के हाथ में तो उड़द का प्रथम ग्रास रखा तो दाता और पात्र दोनों के दिव्य पुण्य से उसका खीर रूप परिणमन हो गया। विधि पूर्वक प्रभु का पारणा होने से चारों ओर आनंद मंगल छा गया।

देवगढ़ आकाश में जय-जय कार करने लगे और रत्न वृष्टि होने लगी, देवदुंदभी बज उठी, पूरे कौशाम्बी नगरी में हर्ष और आश्चर्य फ़ैल गया।

जब नगरवासियों को ज्ञात हुआ कि मुनिराज महावीर प्रतिदिन नगरी में पधारते परन्तु आहार के बिना ही लौट जाते, ऊँ प्रभु ने आज आहार ग्रहण किया, यह समाचार नगरी में फैलते ही लोग हर्ष से दौड़ते हुए उधर आने लगे। जब यह दृश्य देखा कि वृषभदत्त सेठ की एक दासी के हाथ से प्रभु ने आहार लिया है तब सभी आश्चर्य चकित हो गये। लोगों को नहीं पता था कि दासी नहीं वह तो प्रभु महावीर की मौसी है, उनकी श्रेष्ठ उपासिका है।

इधर आहार दान का उत्सव और उधर सेठ लुहार को अपने साथ चंदना की बेडी कटवाने लाये तब नगरवासियों ने बताया, "आपके आँगन में तो महावीर मुनिराज का पारणा हुआ है। चंदना ने भगवान को आहार दान किया है उसी का उत्सव है यह। सेठ आश्चर्य चकित हो घर की ओर दौड़ पड़े। चंदना की बेड़ियाँ किसने काटी, चंदना ने किस प्रकार मुनिराज को आहार कराया, अनेक प्रश्न उनके मन में उठ रहे थे। फिर चंदना से कहने लगे तुझे पाकर मैं धन्य हो गया, तू तो साक्षात देवी स्वरूप है, तूने मेरा घर पवित्र कर दिया, तू दासी नहीं है, तू तो जगतपूज्य माता ही। तब चंदना बोली, पिताजी वह बात भूल जाइए, मुझ पर आपका महान उपकार है, आपने ही मुझे संकट से निकाल कर शरण दी है, मेरी रक्षा की है।

यह सब देखकर सेठानी सुभद्रा घोर पश्चाताप में डूब गई, चरणों में गिरकर चंदना से क्षमा याचना करने लगी-बेटी मैं तुझे नहीं पहचान सकी, मुझ पापिन ने तुझे बहुत कष्ट दिए है – क्षमा कर दो बेटी। तब चंदना ने सेठानी का हाथ पकड़कर कहा माता ! वह सब भूल जाओ, मेरे ही कर्मोदय से यह सब हुआ, लेकिन प्रभु महावीर के पदार्पण से आपका घर पावन हो गया और हम सब धन्य हो गये।

आत्म चिंतन कर रही थी चंदना कि एक आहार दान भावना की से मेरी बेड़ी के बंधन टूट गये तो निज चैतन्य की निर्विकल्प भावना से भव के बंधन टूट जाएँ तो क्या आश्चर्य ? बाह्य बंधन तो टूट गये तो अब अन्तरंग में चैतन्य प्रभु के दर्शन से भव बंधन टूटने में क्या बिलम्ब ?

कौशाम्बी के नगरवासी सभी चंदना के दर्शन करने के लिए तथा उसका अभिवादन करने आ गये। नगरवासियों के मन में अनेक प्रश्न उठने लगे कि यह चंदना देवी कौन है ? कहाँ की है ? तभी राज्य की महारानी मृगावती अपनी नगरी में सेठ वृषभदत्त के घर मुनिराज महावीर के पारणे का समाचार सुनकर हर्ष सहित वहाँ आ गई और पूछा किसके हाथ से हुआ प्रभु का पारणा, तभी उनकी दृष्टि अपनी छोटी बहन "चंदनबाला" पर पड़ी – चंदना तू यहाँ कैसे ? चंदना से लिपट गई।

दोनों बहिनों का मिलन देखकर तथा चंदना महारानी मृगावती की छोटी बहिन है, यह जानकर नगरवासी आश्चर्य चकित हो गये। सेठ-सेठानी सोचने लगे चंदना को दासी के रूप में रखने के कारण अब महारानी न जाने हमें क्या दंड देगीं। चंदना सब भाव पढ़ रही थी तब उसने सेठ-सेठानी को अपने माता-पिता के रूप में महारानी से परिचय कराया, बोली दीदी इन्हीं ने संकट के समय मेरी रक्षा की है, माता-पिता से कम नहीं, मुझ पर इनका महान उपकार है।

वीर प्रभु को पारणा कराने के बाद चंदना ने भी चार उपवासों के तप की पारणा की। फिर मृगावती ने कहा बहिन चंदना ! मेरे साथ चलो और राजमहल में आनंद पूर्वक रहो।

परम वैरागी चंदना बोली – अरि बहिन ! इस संसार में आनंद कैसा ? मैंने इस संसार की असारता देखली है। अब तो वीर प्रभु के मार्ग पर चलूंगी और आर्यिका बनकर उनके संघ में रहूंगी। मृगावती ने भी चंदना की भावना को समझ कर कहा तेरी भावना उत्तम है, परन्तु अभी प्रभु तो मुनिदशा में विचर रहे हैं मौन धारण किये हैं, किसी को दीक्षा नहीं दे सकते। जब वे केवलज्ञान को प्राप्त करेगें तब हम दोनों उनकी धर्म सभा में जाकर आर्यिका व्रत धारण करके उनके चरणों में रहेंगे। तब तक घर में ही रहकर धर्मध्यान करो और हमें सत्संग का लाभ दो।

..... *पृष्ठ 21 से शेष*

was the original name. It was again named as Manasiddhanallur, because of the varthmanadevar who attained siddha status. He retained the original name and fame of Malaikulam. Jains served the people in four ways, (ie) providing education, food, medicine and residence (asylum). It is clear at this place where they provided food for the needy with the help of merchant guilds who travelled along this ancient high way which might have been connected kongu and Pandya countries.

Malaikkulam Vardhmana Devar is found mention at one of the Kalugumalai records. His student Nanthi by name had made one Thirthankara sculpture at Kalugumalai jain centre. So, we can conclude this mana Siddhanallur jain centre had a connection with Kalugumalai centre also.

Some Selective Jaina Settlements in Madurai area

Malaipatti - Jain relics :

On the south eastern side of usilampatti town at a 4k.m distance in Madurai district is located the village Malaipatti. Next to this village at an half kilometre distance lies Putthur hill where in on a rock JainaThirtankara images are carved at the bottom of the hill. Athinathar, Parsvanathar, Mahavirar and Bahubalisculptures are chishled out of the rock. These sculptures might have been carved during the later Pandya period. The ignorant people who do not know the original religion of these figures had tried to deface them by putting a nama on the fore head of Parsvanatha.

Kuppalnaththam :

This village is located at a 4km distance near Sedapatti in Madurai district. The name of the hill at this village is known as Poykaimalai. on the southern slope of this hill JainaThirthankara images like Mahavira and Parsvanatha, Bahubali are carved . Totally nine bas relief sculptures are here. The local people considering them as Hindu deitees and worship them by putting sandal paste, kumkum, ghee etc on festival occasions.

Below these figures one vatteluthu inscription is found with some mutilation. This damaged record furnishes some names of the individuals who were caused to be cut these images. One term 'kurandi' can be read which may be indentified with Kurandi near Aviyur where Thirukkattampalli well flourished during 9-10CCE. Among the donors one lady also mentioned is note worthy.

१६वें आचार्य पदारोहण दिवस पर विशेष

परम पूज्य आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज : विशुद्ध एवं सागर सम व्यक्तित्व

प्रसन्नमन: मुनि प्रणुतसागर

भारतीय वसुन्धरा का यह परम सौभाग्य है कि यहाँ समय-समय पर अनेक ऋषियों, मुनियों, साधुओं ने जन्म लेकर अपने जीवन को सार्थकता प्रदान की; साथ ही अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से जन जन को प्रभावित किया। ऐसे ही एक महनीय सन्त का नाम है- परम पूज्य आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज। आज वे अध्यात्म के क्षेत्र में अपना विशिष्ट नाम रखते हैं और अपनी विशुद्धचर्या से मूलाचार की भावना को जीवन्त करने का सफल प्रयास करते हैं। उन्होंने अपने प्रवास से अनेक गाँवों, नगरों एवं तीर्थों को संस्कारित किया है।

आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज को संस्कारित एवं दीक्षित करने का कार्य जहाँ परम पूज्य गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने किया वहीं उन्हें इस संसार में यह भव प्रदान करने का कार्य मध्यप्रदेश के भिण्ड जिलान्तर्गत ग्राम रूर निवासी सुश्रावक श्री रामनारायण जैन एवं श्राविकारत्न श्रीमती रत्तीबाई जैन ने किया। उन्हें दि. 18 दिसम्बर, 1971 को पिता-माता के रूप में प्राप्त कर राजेन्द्रकुमार जैन (वर्तमान आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज) ने मैट्रिक तक लौकिक शिक्षा प्राप्त की। आप 5 भाई एवं 2 बहिन हैं। संसार से वैराग्य की ओर उन्मुख होकर आपने आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज से दि. 11 अक्टूबर, 1989 को भिण्ड, मध्यप्रदेश में क्षुल्लक दीक्षा, लगभग दो वर्ष पश्चात् दि. 19 जून, 1991 को पन्ना, मध्यप्रदेश में ऐलक दीक्षा तथा लगभग 5 माह बाद दि. 21 नवम्बर, 1991, कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को श्रेयांसगिरि अतिशय तीर्थक्षेत्र पर मुनि दीक्षा ग्रहण की।

मुनि दीक्षा ग्रहण करते ही आपने अपने जीवन को खरा और खरा बनाने के लिए निरंतर स्वाध्याय एवं तप: साधना को अपनाया। कम बोलना और काम का बोलना आपका स्वभाव बन गया। इससे आमजन आपकी ओर आकर्षित होने लगा। आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज के संघ में विशिष्ट एवं विशुद्धचर्या पालक के रूप में आपकी अलग छवि बन गयी। जो आज भी विद्यमान है। लगभग 16 वर्ष की मुनि साधना के पश्चात दि. 31 मार्च, 2007 चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को औरंगाबाद, महाराष्ट्र में गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज ने आपको आचार्य पद प्रदान किया।

आपके जीवन में जिन माता-पिता ने जैनत्व के संस्कार दिये थे और अध्यात्म के मार्ग पर वृद्धिंगत किया था; ऐसी माता श्रीमती रत्तीबाई जैन ने क्षुल्लिका व्रत ग्रहणकर 105 श्री विश्वमती माता जी के रूप में समाधिपूर्वक प्राणों का विसर्जन किया तथा पूज्य पिता श्री रामनारायण जी जैन ने मुनि दीक्षा ग्रहण कर मुनिश्री विश्वजीतसागर जी महाराज के रूप में आत्मसाधना का मार्ग प्रशस्त किया। यह संयोग ही कहें कि माता-पिता का प्रभाव बालक पर पड़ा और बालक का प्रभाव माता-पिता पर पड़ा। तीनों ने साधुत्व को अंगीकार किया और अपने जीवन का अलंकार बनाया।

आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज की वाणी में आगम और अध्यात्म, निश्चय और व्यवहार, समाज एवं लोक नीति का समन्वय दिखाई देता है। वे क्षण प्रतिक्षण स्वाध्याय में निरत रहते हैं। विनय को मोक्ष का द्वार मानते हैं और स्वाध्याय को मोक्ष में साधक। उनके प्रवचन इसी लीक पर आधारित होते हैं। फलस्वरूप उनकी प्रवचन कृतियों का एक विशाल भण्डार समाज को प्राप्त हुआ है। इनमें से कुछ प्रमुख कृतियां इस प्रकार हैं- नियम देशना (भाग 1,2), पुरुषार्थ देशना (हिन्दी, अंग्रेजी), समय देशना (भाग 1 से 16 तक), अध्यात्म देशना, तत्त्व देशना, प्रेक्षा देशना, सर्वोदयी देशना, श्रावक धर्म देशना, सागार-अनगार धर्म देशना, सामायिक देशना, श्रमण धर्म देशना, सोलह कारण भावना अनुशीलन (अप्रकाशित), समाधितंत्र अनुशीलन (हिन्दी, अंग्रेजी), इष्टोपदेश भाष्य (हिन्दी, अंग्रेजी), स्वरूप सम्बोधन परिशीलन (हिन्दी, अंग्रेजी), पंचशील सिद्धांत (हिन्दी, अंग्रेजी), शुद्धात्म तरंगिणी (हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी), निजानुभव तरंगिणी, आत्म बोध, स्वानुभव तरंगिणी, निजात्म तरंगिणी, शुद्धात्म काव्य तरंगिणी, सद्देशना, बोधि संचय, अमृत बिन्दु, अर्हत्सूत्र, देशना संचय, तत्त्व बोध, आइना, विशुद्ध मुक्ति पथ, विशुद्ध काव्यांजलि, विशुद्ध वचनामृत, अध्यात्म प्रमेय, सार सूत्र, वात्सल्य पर्व (रक्षा बंधन), चिद्स्वभाव, सत्स्वभाव, वस्तुत्व (महाकाव्य), सैंतालीस शक्तियाँ, सद्ज्ञान देशना (ज्ञानांकुश), तत्त्वार्थ देशना (तत्त्वार्थ सूत्र), परमार्थ तत्त्वदेशना (6भाग), प्रकृष्ट देशना (प्रवचनसार), प्रवचन प्रभा, गुरुवो भवन्ति शरणं, चिंता रहस्य, जीवन रहस्य, अध्यात्म वाणी, भवाब्धेस्तारको गुरु:, अध्यात्म वचनामृत, चिंता रहस्य, जीवन रहस्य, अध्यात्म वाणी, भवाब्धेस्तारको गुरु:, अध्यात्म वचनामृत, आगम अमृत, प्रवचन पीयूष, प्रवचन प्रदीप, स्वानुभव, भव्य वयणं, ध्रुव स्वभाव, शब्द : अध्यात्मपंथी का, ज्ञायक भाव, वस्तु स्वभाव, चिंतन चंद्रिका, बोधि-सूत्र।

आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज के जीवन पर निम्नलिखित कृतियां लेखकों ने लिखी हैं-आदर्श श्रमण, अध्यात्म का सरोवर, प्रत्यग्आत्मदर्शी, अध्यात्मयोगी, स्वसंवेदी श्रमण, विशुद्ध दर्शन। इससे ही उनके विशाल व्यक्तित्व का पता चलता है। वे नकारात्मकता में भी सकारात्मकता के दर्शन करते हैं। उनकी धारणा है कि-

दही अब हो गया खट्टा, सोचकर तुम दु:खी क्यों हो?
जरा मंथन करो उसका, मधुर नवनीत निकलेगा।।

आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज सहज उपलब्ध संत हैं। उनके वात्सल्य का कोई अंत नहीं है। जब भी कोई पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव होना होता है तो आयोजक उनका ही सान्निध्य चाहते हैं। वे जिसे अपना आशीर्वाद प्रदान कर देते हैं तो पाँच सौ से सात सौ किलोमीटर की दूरी भी अपने पैरों से सहज नाप लेते हैं और यथासमय यथास्थान पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न करवाकर निर्वाण कल्याणक के दिन रथयात्रा होते ही वहाँ से विहार कर जाते हैं। उन्हें इससे कोई मतलब नहीं होता कि किसने कितना धन दान दिया या दिये गये धन का क्या होगा ? वे आते समय भी निर्लिप्त रहते हैं और जाते समय भी। मानो-

लगन के पाँव थककर चूर नहीं होते।
द्वार उपलब्धियों के दूर नहीं होते।।
जिसने भी हौसला बढ़ा लिया अपने कद का,
उसके लिए कभी खट्टे अंगूर नहीं होते।

जब विशुद्धसागर जी महाराज नये-नये आचार्य बने थे तब एक सज्जन उनके पास आये और बोले- महाराज, अब तो आप आचार्य हो गये हैं, थोड़ा आचार्य का रुतबा दिखाया करो।

आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज ने उत्तर दिया- महानुभाव, आचार्य का अर्थ अहंकार नहीं है। जो स्वात्मानुभूति में आचरण करें और आचरण कराये, उसका नाम आचार्य है। सिंहासन पर बैठकर किसी को कुछ भी कह देना; यह तो मैंने आचारसार में कहीं नहीं पढ़ा। बल्कि यह पढ़ा है कि आचार्यों को सामान्य लोगों से बहुत कम बात करना चाहिए, अव्रतियों से दूर रहना चाहिए। काठ के आसन पर बैठ जाने से जो अपने स्वात्मानुशासन को खो दे, इससे बड़ा अभागा कौन होगा ? आसन पर आसीन हो जायेगा परन्तु मेरा जो आसन है वह कोई दे नहीं सकता, कोई ले नहीं सकता। वह आसन है मेरा सिद्धासन। जिसकी चाह हम प्रतिदिन करते हैं। जगत के आसनों को लोग छुड़ा सकते हैं किन्तु संतोष-आसन को कोई मुझ से छुड़ा नहीं सकता। यथार्थ मानना भैया, लघुता से प्रभुता मिली, प्रभुता से प्रभुत्व। जब भी कोई प्रभु बनेगा, लघुता से ही बनेगा। आचार्य पद संघ के निर्वाह के लिए है। मैं भी संघ ही हूँ। साधना में रुतबा नहीं चलता। साधना तो आत्मा का मार्ग है, परमात्मा की शरण है। उनके इस कथन से उनकी पवित्र भावना का पता चलता है।

उन्होंने अपने संघ का विस्तार भी किया है और संघ को संस्कारित भी किया है। मानो वे कह रहे हों कि-

कल तक मेरी निगाह में मंजिल थी,
आज मैंने रास्ते भी बना डाले ।।

आचार्य श्री विशुद्धसागर जी महाराज की विशेषताएं अनेक हैं जिनका वर्णन इस छोटे से लेख में संभव नहीं है। वास्तव में उनका व्यक्तित्व विशुद्ध भी है और सागर के समान भी। वे दीर्घायु हों और आत्म प्रभावना के साथ जिनधर्म की प्रभावना करते रहें; इसी भाव के साथ गुरुदेव के चरणों में त्रिवार नमोस्तु।

लेखन सहयोगी : डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन, 'भारती'

शीतलतीर्थ में पंचकल्याणक आचार्य श्री विशुद्धसागरजी के सान्निध्य में

प्रज्ञापुरूषोत्तम, खण्ड विद्या धुरन्धर, चतुर्थ पट्टाधीश आचार्य श्री योगीन्द्रसागरजी महाराज की प्रेरणा से स्थापित नवोदित क्षेत्र शीतलतीर्थ में 72 फीट उत्तुंग कृत्रिम कैलाश पर्वत का निर्माण कर उस पर 17 फीट विशाल पद्मासन प्रतिमा की स्थापना की जा चुकी है। इस मूर्ति की भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा परम पूज्य चर्याशिरोमणि आचार्य श्री विशुद्धसागरजी महाराज के विशाल संघ सान्निध्य में फरवरी 2024 में सम्पन्न होगी।

भगवान चन्द्रप्रभ की जन्मभूमि चन्द्रपुरी (वाराणसी) में विराजमान संघ के चरणों में डॉ. सविता जैन, अधिष्ठात्री-शीतलतीर्थ के नेतृत्व में एवं शीतलतीर्थ विकास समिति के अध्यक्ष श्री नरेन्द्र रारा (गोहाटी) संयोजकत्व में एक 14 सदस्यीय प्रतिनिधि मण्डल ने एतदर्थ पूज्य आचार्य श्री को दिनांक 11.04.2022 श्रीफल समर्पित कर आशीर्वाद प्राप्त किया। प्रतिनिधि मण्डल में श्री महावीर गांधी, श्री प्रभात दोशी, श्री मोहनलाल मलासिया, श्री दिलीप सोनी (सभी रतलाम), डॉ. अनुपम जैन, श्रीमती निषा जैन, श्री आजाद जैन, श्री अरूण सेठी, श्री अशोक खासगीवाला, श्रीमती ममता खासगीवाला, श्री टी.के. वेद एवं श्रीमती मंजु वेद (सभी इन्दौर) सम्मिलित थे। पूज्य आचार्य श्री ने अपने संघ सान्निध्य की स्वीकृत देते हुए कहा कि भगवान चन्द्रप्रभ के आशीर्वाद से यह पंचकल्याणक फरवरी 2024 में राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर अत्यन्त भव्यता के साथ सम्पन्न हो एतदर्थ मेरा पूर्ण आशीर्वाद है। प्रतिनिधि मण्डल के सदस्यों ने गुरुदेव के संघ को नमोस्तु करते हुए कार्यक्रम को गरिमापूर्ण बनाने हेतु संकल्प लिया एवं तत्काल प्रभाव से ही कार्यवाही प्रारम्भ कर दी।

डॉ. अनुपम जैन

आचार्य श्री सुनीलसागर जी कृत अध्यात्मसार का शास्त्रीय अनुचिंतन

- (डॉ.) अनिल कुमार जैन, जयपुर

जैन परम्परा में भगवान् ऋषभदेव से भगवान् महावीर तक सभी तीर्थंकर अध्यात्म परम्परा के उन्नायक रहे हैं। उनके आध्यात्मिक चिन्तन ने मानव को आत्मतोष प्रदान किया है। आत्म शान्ति के लिए अध्यात्म की अति आवश्यकता है। अध्यात्म शब्द की निष्पत्ति अधि उपसर्ग पूर्वक आत्म शब्द से हुई है अर्थात् जो आत्मा की विशिष्टता है वही अध्यात्म है या जिसका संबंध आत्मा से हो, वह अध्यात्म है। आज हमें आवश्यकता है मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? मुझे कहाँ जाना है? इन प्रश्नों के उत्तरों की खोज की, अध्यात्म से हमें इन समस्त प्रश्नों का समाधान प्राप्त होता है। आज आध्यात्मिक दृष्टि के अभाव के कारण हमारे हृदयों की दूरी अधिक विस्तीर्ण होती चली जा रही है। अध्यात्म की यात्रा बाहर से अन्दर की ओर की है। मनुष्य को आज यह समझना है कि यदि यात्रा बाहर की ओर होती रही तो वह शान्ति; जिसकी उसे खोज है, कभी नहीं मिलेगी, क्योंकि बहिर्मुखी यात्री शान्ति की खोज वहाँ करता है, जहाँ वह नहीं है, शान्ति अन्दर है, उसकी खोज बाहर व्यर्थ है।

इस सम्बन्ध में एक रूपक याद आता है। एक वृद्धा शाम के समय कुछ सिल रही थी। संयोग से अंधेरा बढ़ने लगा और सुई उसके हाथ से छूटकर कहीं गिर गई। महिला की झोपड़ी में प्रकाश का साधन नहीं था और प्रकाश के बिना सुई की खोज असंभव थी। बुढ़िया ने सोचा क्या हुआ, अगर प्रकाश बाहर है तो सुई को वहीं खोजा जाये। वह सारी रात प्रकाश में सुई खोजती रही, किन्तु सुई वहाँ उसे प्राप्त नहीं हुई। उसी समय कोई यात्री वहाँ से निकला, उसने वृद्धा से उसकी परेशानी का कारण पूछा। उसने पूछा-मां सुई गिरी कहाँ थी? वृद्धा ने उत्तर दिया- बेटा सुई तो झोपड़ी में गिरी थी, किन्तु उजाला वहाँ नहीं था अतः वहाँ खोजना संभव नहीं था। उजाला बाहर था, इसलिए मैं यहाँ खोज रही थी। यात्री ने उत्तर दिया- मां! जो चीज जहाँ गिरी है वह वहाँ खोजने पर ही मिलेगी। आज मानव की स्थिति भी उसी वृद्धा के समान है। हम शान्ति की खोज यहाँ कर रहे हैं, जहाँ वह है ही नहीं।

आज भौतिकवाद के कारण मानव के पूर्वस्थापित जीवन मूल्य समाप्त हो गये हैं। आज श्रद्धा का स्थान तर्क ने ले लिया है। आज मनुष्य पारलौकिक उपलब्धियों के स्थान पर इहलौकिक उपलब्धियों को चाहता है। आज हम अध्यात्म के अभाव में नये जीवन मूल्यों का सृजन नहीं कर पा रहे हैं। आज धर्म को, जो पारलौकिक जीवन की सुख-सुविधाओं के नाम पर मानवीय भावनाओं का शोषण कर रहा है; जानना होगा। आज स्वर्ग में जाने के लिए नहीं जीना है, अपितु स्वर्ग को धरती पर लाने के लिए जीना होगा।

आज मानव शास्त्रविद् तो है किन्तु आत्मविद् नहीं। आत्मविद् हुए बिना शांति को नहीं पाया जा सकता। आत्मविद् ही अध्यात्मपने को प्राप्त करता है। अध्यात्म आत्म-उपलब्धि या आत्म विशुद्धि की ही एक पवित्र यात्रा है, उसका प्रारंभ आत्मज्ञान से होता है और उसकी परिनिष्पत्ति आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति अटूट निष्ठा में है। वस्तुतः आज जितनी मात्रा में पदार्थ विज्ञान विकसित हुआ है उतनी ही मात्रा में आत्मज्ञान को विकसित होना चाहिए। विज्ञान की दौड़ में अध्यात्म पीछे रह गया है। पदार्थ को जानने के प्रयत्नों में हम अपने को भुला बैठे हैं। मेरी दृष्टि में आत्मज्ञान कोई अमूर्त, तात्त्विक आत्मा की खोज नहीं हैं, बल्कि अपने आपको जानना है। अपने आपको जानने का तात्पर्य अपने में निहित वासनाओं और विकारों को देखना है। आत्मज्ञान का अर्थ होता है- हम यह देखें कि हमारे जीवन में कहाँ अहंकार छिपा पड़ा है और कहाँ किसके प्रति घृणा-विद्वेष के तत्त्व पल रहे हैं? आत्मज्ञान अपने अंदर झांककर अपनी वृत्तियों और वासनाओं को पढ़ने की कला है।

अध्यात्मसार का तुलनात्मक प्रतिपादन-

आचार्य श्री सुनीलसागर जी कृत 'अध्यात्मसार' ग्रन्थ आत्मस्वभाव में स्थिरता प्राप्त करने के इच्छुक भव्य जीवों को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ में 102 गाथाओं के माध्यम से, मुख्य रूप से चार बातों पर विचार किया गया है-1. आत्मा का स्वरूप,2. आत्मस्वरूप में स्थिरता प्राप्त करने के उपाय,3. आत्मस्वरूप में स्थिर नहीं हो पाने के कारण,4. आत्मस्वरूप में स्थिरता का फल।

1. आत्मा के स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए ग्रन्थकार आचार्य श्री सुनील सागर जी ने कहा है कि-

णिग्गंधो णिव्वण्णो णिरकासो णीरसो अवत्तव्वो।
चेदणगुण-तंजुत्तो णिम्मोहो णिक्कलो अप्पा।।[1]

अर्थात् आत्मा गंध रहित, वर्ण रहित, स्पर्श रहित, रस रहित, अवक्तव्य, चेतनगुण युक्त, मोह रहित तथा शरीर रहित है। इसी प्रकार आचार्य कुंदकुंद स्वामी ने भी आत्मा का स्वरूप कहा है-

अरसमरूवमगंधमव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं।।[2]

आत्मानुभव की सरलता व्यक्त करते हुए आचार्य श्री ने कहा है कि-

पाणी पाणाहिंतो अदिसरलं णिय सहाव अणुध्वणम् ।
किण्णु णियं ण जाणदि णिरत्थयं काल खेवेदि ।।[3]

अर्थात् पानी पीने से भी सरल निज आत्मा का अनुभव है, किन्तु बीज को न जानने से यह जीव व्यर्थ समय गंवाता है। ज्ञानी की विशेषता एवं पहचान बताते हुए बहुत ही मार्मिक दो गाथाओं के माध्यम से ग्रन्थकार ने कही है[4]-

जडवत्थू य जडत्तं चेदा चेयणत्तं ण गुयदि वादा।

इणं भेदविण्णाणं, णिच्चा चिट्ठेहणियरूवे ।।
लघुणिद्दामिदवयणं वदं च णिच्चं धरेज्जसण्णाणं।
अकसायं सुहवित्तिं णिस्संगं णाणिस्सिणं चिण्हा।।

अर्थात् हे ज्ञानी! जड़वस्तु जड़ता को व चेतनवस्तु चेतनता को कभी नहीं छोड़ती है, यह भेदविज्ञान करके निजात्मस्वरूप में चेष्टा करो। (इस प्रसंग में व्याख्याकार ने सामान्य-विशेष गुणों का वर्णन किया है)

थोड़ी निद्रा लेना, मितवचन, सम्यग्ज्ञान, व्रत, अकषाय भाव, शुभवृत्ति व निस्संगता नित्य धारण करना; ये ज्ञानी के चिह्न हैं।

भेद ज्ञान की महिमा बताते हुए कहा है कि-

अज्जावं जित्तियं जे, पत्तं संसार-सायरं तीरं।
चडिऊण भेदणाणे-णावे मोत्तूण सव्वुवहिं।।[5]

अर्थात् आज तक जितने व जो भी जीव संसार-सागर के पार को प्राप्त हुए हैं, वे सभी उपाधियों को छोड़कर भेदज्ञानरूपी नाव पर चढ़कर हुए हैं।

इसी प्रकार आचार्य अमृतचंद्र जी ने समयसार कलश में कहा है-

भेद विज्ञानतः सिद्धाः सिद्धाः ये किल केचनः ।
अस्यैवाभावतोबद्धः बद्धाः ये किल केचन ।।

सभी ध्यानों में आत्मध्यान को श्रेष्ठ बताते हुए कहा गया है कि-

आदस्स झाण-सेट्ठं परमेट्ठीणं च मज्झिमं झाणं।
लोगस्स झाणमधमं विसयाणं वा महाधमं भणिदं ।।[6]

अर्थात् आत्मा का ध्यान श्रेष्ठ है, परमेष्ठियों का ध्यान मध्यम है, लोक का ध्यान अधम तथा विषय-कषायों का ध्यान महा-अधम कहा गया है।

यह पू. आचार्य श्री का बहुत ही श्रेष्ठ चिंतन है। इस प्रकार का इस गाथा से संबंधित विषय मेरे स्वाध्याय में अन्यत्र नहीं आया किन्तु यहाँ पर लोक के चिन्तन को जो अधम ध्यान कहा गया है, वह मेरी समझ में नहीं आया, क्योंकि पूर्वाचार्यों ने लोकचिन्तन को संस्थान विचय धर्मध्यान में ग्रहण किया है (ध.पु. 13, गाथा 13-50) संस्थान विचय धर्मध्यान छठे गुणस्थान पूर्व नहीं हो सकता अतः लोक का चिंतन अधम कैसे हो सकता है? यह विचारणीय बिन्दु है। इस प्रसंग में एक बात और है कि कुछ विद्वान् जो इस समय ध्यान नहीं मानते उनको आचार्य कुंदकुंद स्वामी की मोक्षपाहुड की इस गाथा पर अवश्य विचार करना चाहिए-

भरहे दुस्समकाले धम्मज्झाणं हवेइसाहुस्स।
तं अप्पसहावठिदे ण हु मण्णइ सो वि अण्णाणी ।।[7]

अर्थात् भरतक्षेत्र में दुःषम नामक पञ्चमकाल में आत्मस्वभाव में स्थित साधु के धर्मध्यान होता है; जो ऐसा नहीं मानता है वह अज्ञानी है।

आत्महित के लिए वर्तमान में जीने का उपदेश देते हुए आचार्य श्री कहते हैं कि-

आदा गदं ण चिंतह अणागदं विणो किंचि चिंतेज्जा ।
णाणमए भावेसु य, रमेज्ज णिच्चं विगद संकल्पाः ।।[8]

अर्थात् हे चैतन्य! बीते हुए की चिंता मत कर, भविष्य की भी कुछ चिंता न कर, किन्तु संकल्प रहित होकर ज्ञानमय निजभावों में नित्य रमो।

परिणमदिजेण दव्वं-

आत्म हित करने का उपदेश देते हुए आचार्य श्री ने कहा है कि-

कुज्जा अस्पस्स हिदं जदि सक्कदि परहिदं वि कुज्जेह।
दोण्हं मज्झे णियगं सुद्धसरूवं हि साहेज्जा ।।[9]

अर्थात् आत्मा का हित करो, यदि संभव हो तो परहित भी करो, इन दोनों में निज हित ही श्रेष्ठ है।

इसी प्रकार अन्यत्र भी कहा है कि-

आदहिदं कादव्वं, जं सक्कं परहिदं... ।

कर्मबंध के कारण बताते हुए आचार्य श्री ने कहा है कि-

रागादि विचरपेहिं जीवो बज्झेदि बहुविहं कम्मं।
रागदि णिरोहेहिं सुक्खं वेदेदि अप्पभवं।।[10]

अर्थात् यह जीव रागादि विकल्पों से अनेक प्रकार के कर्मों का बंध करता है। इसी प्रकार आचार्य कुंदकुंद स्वामी ने भी कहा है कि-

रत्तो बंधदि कम्मं मुंचदि जीवो विरागसंपण्णो।
एसो जिणोवदेसो तह्मा कम्मेसु मा रज्ज ।।[11]

कर्मनष्ट करने के उपाय बताते हुए आचार्य श्री ने कहा है कि-

णाऊण य परवत्थुं रागद्दोसा जदि णो उट्ठेदि।
एसो णादा दिट्ठा-भावो य धुणेदि बहुकम्मं ।।[12]

अर्थात् परवस्तुओं को जानकर यदि रागद्वेष कम नहीं होते तो ज्ञाता-दृष्टा भाव करो जिससे कर्म नष्ट हो जायेंगे।

मोक्ष प्राप्ति के लिए करने योग्य कार्य का उपदेश देते हुए आचार्य श्री ने कहा है कि-

दुक्खं सह जिदणिद्दं, थोवो भुंजेह मा बहु जंप ।
झाणज्झयणे य रदी, कुणिज्ज णिच्चं विमोक्खस्स ।।[13]

अर्थात् मोक्ष प्राप्ति के लिए दुःखों को सहो, निद्रा को जीतो, भोजन थोड़ा करो, बहुत मत बोलो और निरंतर ध्यान-अध्ययन में रत रहो।

इसी प्रकार अन्यत्र कहा है कि- **दुःखं सह वस रण्णे .....।**

आत्मभावना का महत्त्व बताते हुए आचार्य श्री ने कहा है कि-

जह पत्त विणा दाणं पुत्त विणा बहुधणं च चित्त विणा।
भत्ती तह आदभावण-विणा वदादिय णिरत्थयं जाणे ।।[14]

अर्थात् जिस प्रकार पात्र बिना दान, पुत्र बिना बहुत धन और

चित्त बिना भक्ति निरर्थक है; उसी प्रकार आत्मभावना, व्रतादि निरर्थक हैं।

इस प्रकार इस कृति का अध्ययन कर हमें अपने आत्म कल्याण का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए, क्योंकि अध्यात्म की शिक्षा यही है कि भौतिक सुख सुविधाओं की उपलब्धि ही अन्तिम लक्ष्य नहीं है। दैहिक एवं आत्मिक मूल्यों से परे सामाजिकता और मानवता के उच्च मूल्य भी हैं। भौतिकवादी दृष्टि के अनुसार सुख और दुःख वस्तुगत तथ्य है। अतः भौतिकवादी सुखों की लालसा में वह वस्तुओं के पीछे दौड़ता है तथा उनकी उपलब्धि हेतु शोषण और संग्रह जैसी सामाजिक बुराइयों को जन्म देता है, जिससे वह स्वयं तो संत्रस्त होता ही है, साथ ही साथ समाज को भी संत्रस्त बना देता है। इसके विपरीत अध्यात्मवाद हमें यह सिखाता है कि सुख का केन्द्र वस्तु में न होकर आत्मा में है। सुख-दुःख आत्म केन्द्रित है। आत्मा या व्यक्ति ही अपने सुख-दुःख का कर्ता और भोक्ता है। वही अपना मित्र और वही अपना शत्रु है। सद्‌गुणों में स्थित आत्मा मित्र है और दुर्गुणों में स्थित आत्मा शत्रु। वस्तुतः आध्यात्मिक आनन्द की उपलब्धि पदार्थों में न होकर सद्‌गुणों में स्थित आत्मा में होती है। अध्यात्मवाद के अनुसार देहादि सभी आत्मेतर पदार्थों के प्रति ममत्वबुद्धि का विसर्जन साधना का मूल्य है। जैसे ही ममत्व का विसर्जन होगा समत्व का सृजन होगा, जब समत्व का सृजन होगा तो शोषण और संग्रह की सामाजिक बुराइयां समाप्त होंगी। परिमाणतः व्यक्ति आत्मिक शान्ति का अनुभव करेगा।

समाचार

पद्म पुरस्कार दुर्लभ उपलब्धियों पर मिलते हैं - मुनि अरुण सागर

पहली बार आचार्य जैन मुनि ने किया स्वर्ण अभिनन्दन ग्रंथ का भव्य लोकार्पण

महावीर भवन कम्पू ग्वलियर में फागुनी आवाहन पर सम्पन्न बुन्देली साहित्य सम्मेलन- 22 के उत्सव में, प्रख्यात जैन साहित्यकार पद्म श्री कैलाष मड़बैया दम्पत्ति के पाणिग्रहणी स्वर्ण जयन्ती समारोह पर साहित्य संसार द्वारा प्रकाशित अभिनन्दन ग्रंथ 'चिर जीवौ जोरी जुरै' का आध्यत्मिक लोकार्पण, पहली बार जैन मुनि आचार्य अरुण सागर महाराज जी द्वारा, भव्य स्तर पर किया गया। इस अवसर पर साहित्यकारों के बीच प्रवचन में मुनि श्री ने कहा कि पद्मश्री या कोई भी बड़ा सम्मान वस्तुतः व्यक्ति का नहीं अपितु ज्ञान का, प्रतिभा का और साधना संयम का होता है। आचार्य श्री ने मड़बैया दम्पति को शुभाशीष देते हुये कहा कि प्रतिभामयी ऐसी विभूति का शीर्ष सम्मान होना चाहिये क्योंकि साहित्य समाज का मुकुट होता है। शुभारम्भ में युगल दम्पति द्वारा दीप प्रज्वलन और महावीर स्वामी के चित्र पर माल्यार्पण एवं 'हमारी माटी बुन्देली' राज्य गीत से हुआ। जैन भजनों का पाठ हुआ। अभिनन्दन ग्रंथ को मुनि श्री से ग्रहण करने के प्रत्युत्तर में उत्सव पुरुष कैलाष मड़बैया ने आभार ज्ञापित करते हुये अपने जैन धर्म आधारित काव्य पाठ सें सैकड़ों श्रोताओं का मन मोह लिया।

समारोह का संचालन डी लिट विदुषी कामिनी व्राचार्या ने किया तो राष्ट्रीय कवि सम्मेलन का संचालन अमित चितवन ने किया और श्रेष्ठ एक दर्जन कवियों ने स्तरीय काव्य पाठ किया। विचार माला के साथ कैलाष मड़बैया की कृति बुन्देली भक्तामर का सांगीतिक प्रस्तुतीकरण 48 काव्यों के साथ 48 दीपक , 48 भक्तों के 48 अर्घों

के साथ मंच पर ही किया गया। सम्पन्न सभ्रान्त विचार माला में देश के अनेक विद्वानों द्वारा मड़बैया दम्पति के यषोंगान के साथ बुन्देली साहित्य पर शोधालेख प्रस्तुत किये गये। उल्लेखनीय साहित्यकारों में डॉ. जवाहर द्विवेदी गुना, अभिनन्दन जैन गोइल इन्दौर, स्वरुप दतिया, डॉ. आर. के. जैन दिल्ली, शिरोमणि भिण्ड, कृष्ण मोहन भोपाल, सुभाष जैन ग्वलियर, रमेश कआरिया पारस, सुखदेवसिंह सेंगर, विमल लैन मैनेजर एवं वीरेन्द्र जैन लाला ललितपुर, भाउ टीकमगढ़ अर्चना ग्वलियर आदि पचास विद्वानों ने विभिन्न सत्रों में अपने वक्तव्य प्रस्तुत किये। रानी – पूनम संगीत दल द्वारा लोक संगीत, जैन गीत एवं स्वर्ण जयन्ती पर रोचक गीत प्रस्तुत किये गये।

णमोकार मंत्र में रंग चिकित्सा और योग विज्ञान

-प्रज्ञाश्रमण आचार्यश्री देवनंदीजी मुनिराज

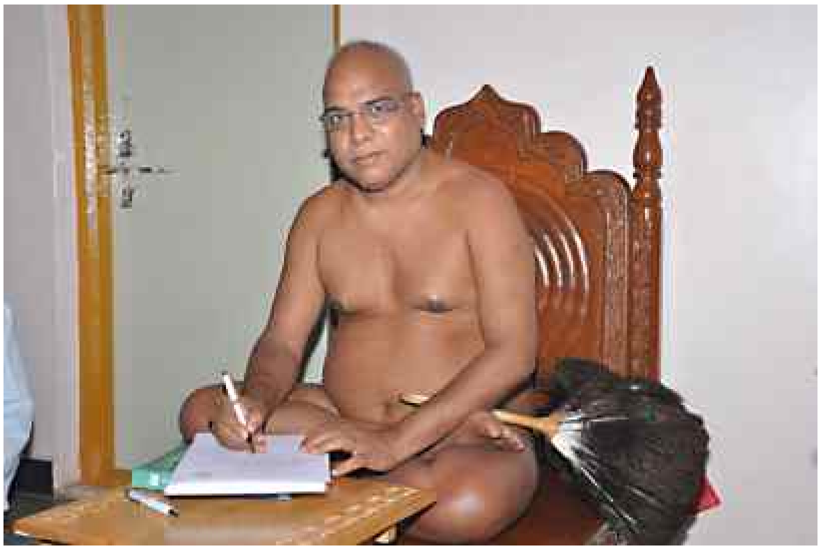

रंग चिकित्सा कोई नई वस्तु नहीं है | णमोकार मंत्र के पदों की विभिन्न रंगों में ध्यान साधना की जाती है | ज्योतिष में विभिन्न रंगों के रत्न धारण किये जाते हैं वे शारीरिक दृष्टि से रंग चिकित्सा ही तो हैं, किन्तु हमने उसे सीमित परिप्रेक्ष्य में लिया है जबकि आधुनिक विज्ञान ने उसे विस्तृत आयाम देकर रंग चिकित्सा विज्ञान का रूप दे दिया, सिद्धांत निश्चित कर दिये और रंगों द्वारा चिकित्सा करने लगे| एक नया चिकित्सा विज्ञान प्रचारित हो गया|

क्या आपने कभी सोचा कि मुस्लिम हमेशा काले रंग का लबादा, सिर से पॉंव तक ढ़कने वाला वस्त्र (रोब) क्यों धारण करते हैं? वैदिक सन्यासियों के गेरुआ वस्त्र धारण करने का क्या कारण है? भगवान महावीर द्वारा जैन साध्वियों के लिए श्वेत वस्त्र निर्धारित करने के पीछे क्या वैज्ञानिक रहस्य है?

गहराई से विचार करें तो यह सब शरीर की रंग चिकित्सा है- स्वस्थ्यता नीरोगता का प्रभावी उपाय और उपचार है जो सहज में सिद्ध हो जाते हैं|

आधुनिक रंग चिकित्सिकों ने कई रंग स्वीकार किये हैं जैन दर्शन द्वारा वर्णित अत्याधुनिक विज्ञान द्वारा समर्थित ५ मूल रंगों के अतिरिक्त वे बैगनी, जामुनी, गुलाबी आदि कई रंग और स्वीकार करते हैं तथा उनसे उपचार भी करते हैं | उदा. के लिए उत्साह और जोश के लिए गुलाबी रंग बताते हैं|

पं. जवाहरलाल नेहरू हमेशा अपने कोट में गुलाबी फूल लगाये रखते थे | चिकित्सा विज्ञान की अधिक गहराई में न जाकर हम अपने मुख्य विषय पर आते हैं | पहले संक्षेप में यह समझ लें कि किस रंग की न्यूनता अथवा अधिकता का शरीर में क्या प्रभाव होता है? श्वेत रंग की न्यूनता से स्वास्थ्य गड़बड़ा जाता है | लाल रंग की न्यूनता से प्रभाव बढ़ता है | उत्साह हीनता आती है और लाल रंग की अधिकता होने से उत्तेजना, टेन्शन, बी. पी. आदि बढ़ते हैं, पीले रंग की कमी से बुद्धि मंद होती है | नीले रंग की अधिकता से जड़ता-आलस्य बढ़ता है | काले रंग की कमी से शरीर की प्रतिरोध क्षमता कम होती है | वस्तुतः ये सभी रंग संतुलित मात्रा में रहना चाहिये, इनकी न्यूनता और अधिकता दोनों ही हानिकारक है |

इन रंगों से आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक, शारीरिक और व्यवहारिक अनेक प्रकार के लाभ देखे जाते हैं | णमोकार मंत्र के पॉंचों पदों की मूल रंगों में जप ध्यान साधना से इन रंगों का संतुलन बना रहता है | यदि आपने ८-१० मिनिट तक एक-एक पद की रंग ध्यान साधना की तो ४०-५० मिनिट में सभी पॉंचों पदों की साधना पूर्ण हो जायेगी और शरीर स्वस्थ होगा|

णमोकार मंत्र और योग विज्ञान-

'योग' एक छोटा सा शब्द है और उसके दो अर्थ है-

१. चित्तवृत्तियों का निरोध और किसी एक ध्येय पर चित्त को स्थिर करना |

२. जुड़ना-जोड़ना-जैसे गणित में जोड़ को योग कहा जाता है | जैन आध्यात्मिक दृष्टि से आत्मा का, आत्माद्वारा, आत्म शुद्धि के लिए जुड़ना जोड़ना योग है |

लेकिन इस संक्षिप्त योग शब्द का विस्तार उत्तरकाल में अत्यधिक हुआ | निष्काम कर्म योग, राज योग, हठ योग, लय योग, सहज योग आदि अनेक प्रकार के योग प्रचलित हो गये | सभी प्रकार के योगों की व्याख्या, विवेचना, शुभाशुभफल आदि का निरूपण करते हुए विशाल ग्रंथ रचे गये | यहॉं तक कि सभी साधकों को योगी संज्ञा से अभिहित किया जाने लगा, जैन तीर्थंकरों को भी परम योगी कहा गया है |

अब तो योग शब्द सभ्य संसार-व्यापी हो गया है | कनाडा, अमेरिका, इंगलैण्ड, जर्मनी आदि सभी देशों में योगाश्रम खुल गये हैं | योग शिक्षा की कक्षाएँ लगने लगी हैं | योगीजन योग का प्रदर्शन कर रहे हैं | योग की विस्तृत धारा अब भी प्रवाहमान है |

हम इस धारा में बहकर योग के विस्तृत विचार मंथन की उलझन में नहीं उलझना चाहते | अपने मूल मंतव्य की परिधि में रहकर जैन दर्शन के विशेष योग-संवर योग, भावना योग आदि का विवेचन णमोकार महामंत्र से संदर्भित करके करना चाहेंगे|

यह ध्यान रखें कि जैन दर्शन में मन-वचन-काय को योग माना गया है और उसका लक्ष्य (जैन योग का लक्ष्य) है, तीनों योगों का निरोध करके अयोग होना, सिद्ध होना | आत्मशुद्धि की प्रक्रिया जैन योग का प्रारंभ है और आत्मशुद्धि की पूर्णता (अयोग अवस्था) जैन योग की चरम सीमा है |

प्राचीन क्षेत्र नळदुर्ग जि. उस्मानाबाद में होगा जीर्णोद्धारित मंदिर का भव्य पंचकल्याणक महोत्सव

नळदुर्ग : महाराष्ट्र के मराठवाडा प्रांत में उस्मानाबाद जिले के तुलजापूर तालुका स्थित नळदुर्ग ग्राम में भव्य किले के समीप चालुक्यकालीन श्री १००८ आदिनाथ दिगंबर जैन मंदिर अत्यंत जीर्ण हुआ था| अनेक दिगंबर जैन संतों के आशीर्वाद से भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी महाराष्ट्र अंचल के महामंत्री प्रो. महावीर शास्त्री जी के मार्गदर्शन में क्षेत्र का विकास एवं जीर्णोद्धार संपन्न हुआ| तीन मंजिला भव्य जिनमंदिर स्थापित होकर अत्यंत आकर्षक विधि का भी निर्माण हुआ है| ग्राम के अनेक परिवारों ने अपना योगदान देकर क्षेत्र को विकसित किया है|

इसी उपलक्ष्य में परमपूज्य दिगंबर आचार्यश्री सुयशसागरजी मुनिराज, पूज्य मुनिश्री सुहितसागरजी, क्षुल्लकश्री सुनम्रसागर जी एवं आर्यिका शुद्धोहमश्री माताजी के मंगल सान्निध्य में शुक्रवार दि. ६ मई से मंगलवार दि. १० मई २०२२ तक भव्य पंचकल्याणक महोत्सव प्रतिष्ठाचार्य डॉ. महावीर शास्त्रीजी के मार्गदर्शन में संपन्न हो रहा है| इस जीर्णोद्धारित मंदिर को तीर्थक्षेत्र कमेटी के महाराष्ट्र अंचल के अध्यक्ष श्री. अनिलजी जमगे, उपाध्यक्ष श्री. रविंद्र कटकेजी, महामंत्री डॉ. महावीर शास्त्री, मंत्री श्री. देवेंद्र शटगार, पंडित नेमचंद आग्रे गुरुजी आदि ने भेंट देकर कार्य का निरीक्षण किया| क्षेत्र के ट्रस्टी के दिये हुए निवेदनानुसार उचित कार्यवाही के बाद क्षेत्र को तीर्थक्षेत्र कमेटी से संलग्नित करने का आश्वासन दिया| भव्य कार्यक्रम से संपन्न होने वाले इस महामहोत्सव में सभी धर्मानुरागी श्रावक-श्राविका पधारें इस प्रकार का निवेदन क्षेत्र की ओर से अध्यक्ष डॉ. श्री. श्रेणिक पाटील (9987577576) ने किया है|

सम्मेदशिखर जी तीर्थसुरक्षा हेतु तीर्थक्षेत्र कमेटी के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री शिखरचंद पहड़िया को 5 लाख रु की सहायता राशि का चेक प्रदान करते हुए श्री विवेक काला (जौहरी), जयपुर।

प्राचीन साहित्य का संरक्षण वर्तमान की आवश्यकता

-कुलपति प्रो. रेणु जैन, इंदौर

देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर द्वारा मान्य शोध केन्द्र कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इंदौर द्वारा कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ एवं ज्ञानोदय पुरस्कार 2021 का समर्पण समारोह 27.03.2022 को दोपहर 3.30 पर कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ के परिसर में पूज्य क्षुल्लक श्री विनयनन्दि जी महाराज के पावन सान्निध्य एवं देवी अहिल्या विश्वविद्यालय की **कुलपति प्रो. रेणु जैन** की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. भीमराव अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, डॉ. अम्बेडकरनगर (महू) के कुलपति **प्रो. डी. के. शर्मा** तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में, प्रो. वी. बी. गुप्ता, विभागाध्यक्ष-डाटा विज्ञान एवं पूर्वानुमान अध्ययनशाला, इंदौर एवं न्यायमूर्ति श्री जे.के. जैन उपस्थित रहे। समारोह की अध्यक्षता करते हुए कुलपति प्रो. रेणु जैन-इंदौर ने कहा कि प्राचीन साहित्य का संरक्षण वर्तमान की आष्यकता है और इसका प्रचार-प्रसार नई पीढ़ी को आगे आकर करना होगा। ज्ञान के इस नवाचार को आगे बढाने में नये शोधार्थियों को आगे आना होगा। विश्वविद्यालय में प्राचीन भारतीय गणित विषय पर एक शोध केन्द्र डॉ. अनुपम जैन के निर्देशन में खोला गया है। जिस प्रकार कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ सभी धर्मों के लिये खुला है उसी प्रकार हमारे विश्वविद्यालय में प्राचीन ज्ञान को प्रकाश में लाने हेतु कार्य किया जा रहा है। प्राचीन भारतीय गणित अध्ययन केन्द्र के अंतर्गत वैदिक एवं जैन गणित पर भी 6 महीने का एक पाठ्यक्रम शुरू किया जा रहा है। प्रस्तावित दर्शन विभाग में जैन दर्शन के अध्ययन में कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ बहुत उपयोगी होगा एवं इससे सभी वर्गों को लाभ होगा। समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में अपने विचार व्यक्त करते हुए प्रो. डी. के. शर्मा-महू ने कहा कि 45000 पुस्तकों के बीच बैठकर मैं अपने आप को गौरवान्वित महसूस कर रहा हूँ। हमारे विश्वविद्यालय द्वारा अहिंसा, सौहार्द्र एवं जैन विरासत शोधपीठ की स्थापना की गई है। जहाँ जैन धर्म, दर्शन, साहित्य, संस्कृति एवं जैन इतिहास पुरातत्व का अध्ययन किया जायेगा। विश्वविद्यालय के अनुरोध पर प्रो. अनुपम जैन ने इस पीठ को अपना मार्गदर्शन देना स्वीकार किया है। वर्तमान में जैन धर्म और दर्शन पर अथवा जैन संस्कृति और विरासत पर कोई प्रमाण पत्र या डिप्लोमा कोर्स शासकीय विश्वविद्यालय में नहीं चल रहा है फलतः मैं अपने विश्वविद्यालय से इस महत्वपूर्ण विद्वानों की संगीति के मध्य यह पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने की घोषणा करता हूँ। प्रो. अनुपम जैन हमें इस बाबत भी पूर्ण सहयोग एवं मार्गदर्शन प्रदान करें ऐसा मेरा अनुरोध है। समारोह में विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे प्रो. वी. बी. गुप्ता, इंदौर ने कहा कि कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ ज्ञान का भण्डार है। आज यहाँ आकर बहुत प्रसन्नता हुई। यहाँ की पाण्डुलिपियों का उपयोग हम अपने डाटा साइंस विभाग में करेंगे। हमारे विभाग द्वारा अनुवाद का कार्य भी साफ्टवेयर के माध्यम से किया जा रहा है जिससे बिना किसी विद्वान की सहायता से 70 से 75 प्रतिशत सही अनुवाद प्राप्त किया जा सकता है। इससे प्राचीन साहित्य का कई भाषाओं में अनुवाद संभव हो सकेगा। हमारे विभाग के आचार्य डॉ. अनुपम जी का पूर्ण सहयोग हमें इस कार्य में मिलेगा। कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ पुरस्कार 2021 प्राप्त करने के उपरान्त डॉ. कल्पना जैन, नई दिल्ली ने कहा कि पाण्डुलिपियों को प्राप्त करने के लिये बहुत प्रयत्न करना पड़ते है अतः मैंने इसके अनुवाद एवं प्रकाशन का कार्य किया। डॉ. अनुपम जैन के निर्देशन में कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ पाण्डुलिपियों का संग्रहण, संरक्षण और डिजिटाइजेशन कर रही है। यह देखकर बहुत प्रसन्नता हुई। मैं अपने छात्रों को भी यहाँ पर भेजकर पाण्डुलिपियों पर शोध कार्य करवाऊँगी। सांप्रदायिकता से ऊपर उठकर कार्य करने की परिपाठी मैंने यहाँ देखी है और यह कार्य कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इंदौर जैसी संस्थायें ही कर सकती है। ज्ञानोदय पुरस्कार 2021 प्राप्त करने के उपरान्त डॉ. संजीव सराफ, वाराणसी ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि आज कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ पुस्तकालय की अंतर्राष्ट्रीय साख है। पुस्तकों के अधिकाधिक उपयोग हेतु कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ पुस्तकालय का वर्गीकरण डयूई डेसीमल क्लासीफिकेशन का कार्य डॉ. अनुपम जैन के अनुरोध पर हमारी टीम द्वारा सर्वप्रथम किया गया एवं बाद में इसे जैनालॉजी क्लासीफिकेशन की मान्यता प्राप्त हुई। अर्हत् वचन के अब तक प्रकाशित समस्त अंक हमारी बी.एच.यू लायब्रेरी में उपलब्ध हैं और इसके पाठक हमारे

पुस्तकालय में भी अनेक हैं। यूजीसी से मान्यता प्राप्त यह एकमात्र जैन शोध पत्रिका है। आगे आपने कहा कि हमें अपने प्राचीन इतिहास की रक्षा करनी होगी क्योंकि यदि इतिहास नहीं समझोगे तो इतिहास नहीं बचेगा। डॉ. सूरजमल बोबरा जी की इतिहास के प्रति जो जिजीविषा है उसको मैं प्रणाम करता हूँ। इस अवसर पर प्रो. जे.सी. उपाध्याय, इंदौर, प्रो. पी.एन. मिश्र, इंदौर एवं प्रो. पारसमल अग्रवाल, उदयपुर ने भी अपने उद्गार व्यक्त किये। पुरस्कृत विद्वानों का सम्मान श्रीमती विमला कासलीवाल, श्री अमित कासलीवाल, डॉ. सूरजमल बोबरा, डॉ. अनुपमा विकास जैन एवं समस्त निदेशक मण्डल द्वारा किया गया। प्रशस्ति का वाचन डॉ. अनुपम जैन द्वारा किया गया। इस अवसर पर अर्हत् वचन के नवीन अंक का विमोचन प्रो. रेणु जैन एवं प्रो. डी.के. शर्मा द्वारा अर्हत् वचन के सम्पादक मण्डल के सहयोग से किया गया। डॉ. संगीता विनायका के मंगलाचरण से प्रारंभ संगोष्ठी में शताधिक विद्वान उपस्थित रहे। उदासीन आश्रम ट्रस्ट का परिचय श्री अमित कासलीवाल द्वारा दिया गया। कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ एवं अर्हत वचन का परिचय डॉ. अनुपम जैन द्वारा दिया गया। जोराष्ट्रियन कालेज का परिचय डॉ. अनुपमा विकास जैन द्वारा दिया गया। ज्ञानोदय फाउन्डेशन का परिचय डॉ. सूरजमल बोबरा द्वारा दिया गया। डॉ. संगीता विनायका के मंगलाचरण से प्रारंभ संगोष्ठी में शताधिक विद्वान उपस्थित रहे। संगोष्ठी का सफल संचालन **प्रो. श्रेणिक बण्डी** ने किया। आभार प्रदर्शन **डॉ. अनुपम जैन** द्वारा व्यक्त किया गया।

पेनूर दिगंबर जैन मंदिर का जीर्णोद्धार प्रारंभ

पेनूर, ता. मोहोल जि. सोलापुर के प्राचीन श्री दिगंबर जैन मंदिर का भव्य जीर्णोद्धार प्रारंभ हो चुका है| सोलापुर-पंढरपुर मार्ग पर स्थित इस ग्राम में पुरातन काल से जिन मंदिर विद्यमान है| परमपूज्य आचार्यरत्नश्री बाहुबली महाराज जी के पावन निर्देशन में करीब ५० वर्ष पूर्व इस मंदिर की जीर्णोद्धार पूर्वक प्रतिष्ठा संपन्न हुई थी| इस मंदिर को भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के सलग्नता हेतु मंदिर के अध्यक्ष श्री कस्तुरेजी ने महाराष्ट्र अंचल के अध्यक्ष श्री अनिलजी जमगे एवं पदाधिकारीयों को आमंत्रित किया था| समिति ने अवलोकन के पश्चात् प्रथमतः जीर्णोद्धार प्रारंभ करने हेतु आह्वान किया एवं शिखर कार्य हेतु प्रोत्साहित किया| इसी प्रेरणा से त्वरित शिखर जीर्णोद्धार प्रारंभ हुआ है| तीर्थवंदना के सहसंपादक एवं महाराष्ट्र अंचल के महामंत्री प्रो. डॉ. महावीरजी शास्त्री के मार्गदर्शन में हो रहे इस विकास कार्य में अंचलीय उपाध्यक्ष श्री मिहिर गांधी ने भी विशेष प्रोत्साहान कार्य प्रारंभ किया है| इस हेतु श्री रविंद्रजी कटके, श्री देवेंद्रजी शेटगार, श्री वालचंद पाटील आदि ने भी प्रत्यक्ष भेंट दे कर समाज को प्रोत्साहित किया| ग्रामीण क्षेत्र में हो रहे इस प्रकार के विकास कार्य के समाज का सहयोग मिले ऐसा आह्वान मंदिर समिति के अध्यक्ष श्री प्रकाश कस्तुरे (९४२१०७६९२५) द्वारा किया गया है|

'गोपाचल' जैन तीर्थ बनाम ग्वालियर दुर्ग

पद्मश्री कैलाश मड़बैया, भोपाल

मध्यप्रदेश में अवस्थित ग्वालियर , मध्यरेल के दिल्ली-झांसी मेन रेलवे लाइन पर सुपरिचित प्राचीन एतिहासिक नगर तो है ही, पर अत्यन्त सम्पन्न जैन तीर्थ भी हैं। विडम्बना ही है कि एक उस जमाने के राजा होते थे जो अगणित जिनविम्बों की स्थापना करा कर अपना जीवन धन्य कर गये और दूसरी ओर आज के कथित राजा हैं जो उन जिन बिम्बों को ध्वस्त करने में एवं अपने आप को विधर्मी सिद्ध करने पर आमादा हैं। ग्वालियर दुर्ग स्थित गोपाचल जैन तीर्थ को देखने से सिद्ध होता है कि कभी सैकड़ों साल तक यहाँ का राजधर्म निश्चित ही जैन धर्म रहा होगा। वरना कैसे हजारों जैन दिव्य प्रतिमायें इस पर्वत दुर्ग पर स्थापित होतीं व संरक्षित बनी रहतीं ? दरअसल इस सदी के प्रारंभ में जब इन पंक्तियों का लेखक अपनी पुस्तक 'बुन्देलखण्ड के जैन तीर्थ' वर्ष २००४ में प्रकाशित करा रहा था तभी अन्य तीर्थों के साथ ग्वालियर के जिनालयों के दर्शन किये थे। फिर उसके बाद अभी ९ मार्च २२ को जब वहाँ के साहित्यिकारों ने मेरी पाणिग्रहणी स्वर्ण जयन्ती मनाने मुझे वहाँ आमंत्रित किया तो विश्व जैन संगठन की एक बुलेटिन मुझे, गोपाचल के लिये अपना जीवन समर्पित करने वाले श्री सुभाष जैन द्वारा भेंट की गई जिसे मनन कर एक संवेदनशील लेखक होने के नाते मुझे बहुत निराशा हाथ लगी कि क्या से क्या हो गया इस अन्तराल में ? प्रसिद्ध इतिहासविद कनिंघम ने १८४४ में ही ग्वालियर के गौरव का सप्रमाण बर्णन कर बताया था कि कितने भव्य १५०० जिन बिम्ब ग्वालियर किले स्थित जैन तीर्थ गोपाचल में प्रणम्य हैं। जिन्हें अब नष्ट ध्वस्त कर अपने थोड़े से स्वार्थ के लिये उजाड़ जाकर अवैधानिक कब्जे मठाधीशों द्वारा किये जा रहे हैं। इसके पहले कि हम वर्तमान के बारे में आपको सचेत करें, यह देख लेना श्रेयस्कर होगा कि वास्तव में उक्त सम्पन्न अतीत था क्या ?

ग्वालियर की स्थापना -सन् २७५ में की गई बताते हैं कछवाहा राजा सूरसेन ने इसे बसाया था। ग्वाल ऋषि से भी इसकी स्थापना को जोड़ा जाता है।तब से अब तक अनेक शासकों ने ग्वालियर पर राज किया और निर्माण-विध्वंस होते रहे पर इन सबके बावजूद यहाँ के कलाविम्ब अक्षुण्ण रहे। सचमुच एसे समर्पित महान लोगों को नमन करने का मन होता है। सम्पन्न अतीत ..वर्तमान में विद्यमान शिल्प सौन्दर्य अक्षुण्ण बना रहे अब और अधिक न बिगड़े यह हम कृतज्ञ देशवासियों का दायित्व है। इस लेख का अभीष्ट भी यही है कि जो हम बना नहीं सकते तो बिगाड़ने का कलंक क्यों झेलें?

तीर्थ की स्थिति:-वि सं १४५५ में तोमरवंश का कब्जा ग्वलियर दुर्ग पर हुआ बताते हैं जिन्होंने १०५वर्ष यहाँ राज्य किया। इन्ही नरेशों में महाराज डूँगरसिंह और कीर्तिसिंह ने इस दुर्ग में अनेकानेक कलात्मक जैन मंदिरों-मूर्तियों का निर्माण कराया था। पुरातत्व की दृष्टि से ग्वलियर दुर्ग के जिनबिम्बों को पाँच भागों में विभक्त किया जा सकता है।-----१ उरवाही समूह, २ दक्षिण पश्चिम समूह,३ दक्षिण पूर्व समूह, ४ उत्तर पूर्व और ५ उत्तर पश्चिम समूह। कुल१५०० जिन मूर्तियों में कला की दृष्टि से दक्षिण पूर्व और विशालता की दृष्टि से उरवाही समूह रेखांकित किये जा सकते हैं।

वर्धमान मंदिर- ८वीं सदी में निर्मित, ७२ फुट उँचे व १००फुट लम्बे जिनालय के निकट अब सिंधिया पब्लिक स्कूल है। वर्धमान जिनालय पाँच खण्ड का बना था पर अब केवल तीन खण्ड देखे जा सकते हैं। चौथा खण्ड आधा बचा है। इसमें मूल नायक भगवान महावीर की मूर्ति पूर्ण स्वर्ण की रही। ललाट पर पार्श्वनाथ व महावीर प्रतिमा उत्कीर्ण है। मंदिर की कुछ जिन मूर्तियाँ सिंधिया स्कूल में और प्राचार्य निवास के गार्डन में रखीं मिलतीं हैं।

आधुनिक शिक्षा के नाम पर पुरातन संस्कृति से खिलवाड़ ही मूल विनाश का यहाँ कारण है।

आदिनाथ जिनालय- उरवाई के दक्षिण समूह में ५७फुट उँची अवगाहना वाली प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ की सर्वाधिक उँची विशाल प्रतिमा अद्वितीय रूप से दर्शनीय है। चरण चौकी पर सं. १४९७ उत्कीर्ण है। यहाँ अनेक प्रतिमायें सड़क के नीचे दबा दी गई बताई जा रहीं है।

शान्तिनाथ समूह: उत्तर उरवाई- मूल नायक शान्तिनाथ के साथ यहाँ अनेक चैत्य, मानस्तंभ और शिलालेख दर्शनीय हैं।

नमिनाथ बनाम सिद्धाँचल: पश्चिम उरवाई- साढ़े तेइस फुट अवगाहना वाली पद्मासन प्रतिमा तीर्थंकर नमिनाथ की केवल यही दर्शनीय है। यहीं ५ गुफाओं में भी अनेक जिनविम्ब दर्शनीय है।

नेमिगिरि उत्तरपूर्व समूह- गुहा में २२फुट उत्तुंग अवगाहना वाली पद् प्रतिमा नेमिनाथ भगवान की अत्यन्त दिव्य है। ९ अन्य गुफाओं में भी जिन प्रतिमायें वन्दनीय है। पत्थर की बावड़ी/पार्श्वनाथ अतिशय जैन तीर्थ- तेइसवें जिन तीर्थंकर पार्श्वनाथ की विशालतम प्रतिमा ४२ फुट उत्तुंग, ३०फुट चौड़ी

जिसके पीठासन पर उल्टा स्वास्तिक है, एक पत्थर से बनी सत्त जलस्रोत वाली बावडी के पास होने से एक पत्थर की बावड़ी तीर्थ के नाम से ही प्रसिद्ध है। यहाँ चौबीसों तीर्थंकरों की भव्य प्रतिमायें विद्यमान हैं।

त्रिशलागिरि बनाम दक्षिण पश्चिम समूह- यहाँ माता त्रिशला की भव्य मूर्ति और महावीर स्वामी के पाँचों कल्याणक केवल इसी तीर्थ पर दर्शनीय हैं। यह ग्वालियर दुर्ग में गुप्त कालीन कला का सर्वाधिक प्राचीन स्थल है जहाँ अन्य तीर्थंकर मूर्तियाँ भी उकेरी मिलतीं हैं।

मान मंदिर-केन्द्रीय संग्रहालय एवं गूजरी महल के निकट,बाह्य भाग में पाँच तीर्थकरों की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं जिन्हें मानमंदिर नाम से जाना जाता है। केवली निर्वाण क्षेत्र- पुराणों में उल्लिखित नेमिनाथ भगवान के पूर्व केवली का इसी गोपांचल पर निर्वाण हुआ था यह स्थल यहीं हैं।

तैलंगाना मंदिर- १०० फुट उत्तुंग, आर्य व द्रविण शैली कला का प्रतीक यह जिनालय मुख मुख से तेलियों का मंदिर भी कहा जाता है। आठवी नवी सदी के इस मूल जिनालय से मूर्तियाँ नदारत कर दी गईं है परन्तु चारों ओर कलाविम्बों एवं जिन प्रतिमाओं से इसकी प्रमाणिकता अप्रभावी है।

सास बहू मंदिर- सबसे ज्यादा ख्याति वाला यह जिनालय लघु अवश्य है पर स्वर्ण का इतना अधिक उपयोग इसमें किया गया कि इसे कनकाचल भी कहते हैं। १०९३ में इसे कच्छपधात वंश नरेश महिपाल ने पूर्ण कराया था। अष्टान्हिका पर्व की अनुकृति पर निर्मित नंदीश्वर दीप के आधार पर यह बनाया गया था। अत्यन्त भव्य रचना है।

ग्वलियर नगर में भी अनेक जिनालय, ख्यात और दर्शनीय है। वर्तमान - ग्वालियर के नाम सें दो कलंक आज भी जुड़े, लोगों की जवान पर आ जाते हैं -एक १८५७ में वीरांगना लक्ष्मीबाई को मौत के घाट उतारने में और दूसरा १९४७ के बाद में, महात्मा गाँधी की हत्या में, ग्वालियर का परोक्ष रूप में हाथ बताया जाता है। पर अब तीसरा कलंक और किले के पुरातत्व को समाप्त करने का लग रहा है-जिन प्रतिमाओं के विध्वंश करने का। इससे कलंक लगना कोई नई बात नहीं है लज्जाहीनों को? हालाँकि विकसित इकीसवीं सदी में होना तो यह चाहिये कि पुराने पाप धोने का जतन पश्चाताप करके और कुछ पुण्यार्जन से कर लेते तो मान बढ़ता पर बड़ों की बड़ी बातें? उन्हें कौन जगा सकता है जो बहाने बना के सो रहे हों? उक्त सम्पन्न श्रमण तीर्थ ग्वलियर-किले को आज के कथित राजाओं ने अपनी बपौती मान अहिंसक जैन समाज को ही नहीं, पुरातत्व और शिल्प कला प्रेमियों को धता बताते हुये प्रशासनिक मशीनरी का दुरुपयोग कर विध्वंश की नई इबारत लिखना शुरु ही नहीं किया वरन् जबरन कब्जा भी कर लिया है। दुर्भाग्य यह है कि सन् २००२ में सम्पूर्ण किले को राष्ट्रीय स्मारक होने की अधिसूचना जारी हो चुकी है। फिर भी न सरकार को चिन्ता है, न पुरातत्व विभाग को ? और जैन समाज तो अहिंसक के नाम पर कायरता का बाना पहन चुकी है। जिन जैनियों को अपने शिखर जी और गिरनार जी महातीर्थों के जाने का अहसास नहीं हो रहा वे ग्वलियर किला तीर्थ भी खो दें तो उन्हें कागजी गम भले हो पर वे अधिक कुछ करने को तैयार नहीं दिखते ? मुगलों ने १५५६ में बाबर द्वारा जिन बिम्बों को नष्ट कराया और गोरो ने भी मनमानी की। इनके नष्ट करने से जो छोड़ा गया उसे अब विनष्ट करने पर कतिपय स्वार्थान्ध लोग आमादा है...... आज की

पीढ़ियाँ अपने गौरव को न जान सकें इसलिये धर्म प्रेमी भक्तों और पर्यटकों का आना जाना तक बंद कर दिया गया है। ८वीं से १५वीं सदी के १५०० जिन बिम्ब और ८७ गुफाओं का अस्तित्व निश्चित ही खतरे में है।

कतिपय प्रमाण देखिये - उरवाई क्षेत्र में जैन तीर्थ के पास ही जानबूझकर सिंधिया पब्लिक स्कूल बनाया गया। सिंधिया शासन काल में सन् १८७८-७९ में एक अंग्रेज इंजीनियर द्वारा सड़क बनाने के नाम पर साढ़े चार हजार जैन प्रतिमाओं को नष्ट करके सडक के नीचे दबा दिया गया। सिंधिया स्कूल के पास स्थित ८वीं सदी के भव्य जैन मंदिर पर जबरन कब्जा करके खेल के मैदान के नाम पर अनेक जैन मूर्तियाँ आज भी यहाँ वहाँ छिपा कर रखीं गईं हैं। क्या भगवान की यह अविनय इन्हें सुखी रहने देगी ? भले वे सत्ताओं के लिये दल बदलें पर दिल तो दगा देगा ही। स्थानीय प्रशासन की मिली भगत से इन्होंने अनेकों आवासीय होस्टल के नाम पर आवास बना रखे हैं जिनके सीवेज का गंदा पानी, भगवान की मूर्तियों पर बहाया जा रहा है । क्या यह पापाभिषेक इन कथित राजाओं को नर्क के जीवन जीने के लिये अभिशापित होने को पर्याप्त नहीं है ?

गंदे पानी के गिरने से प्राचीन प्रतिमाओं का क्षरण निरंतर होने से शिल्प कला-वैभव विनष्ट होने के कगार पर तो है ही। पुरातत्व विभाग के पत्र क्र ९८१० दि २७/१०/२०० द्वारा अवगत कराया गया कि १९०६ के गजट में प्रकाशित होने के कारण सिंधया स्कूल के आस पास की सभी जमीन जैन तीर्थान्तर्गत आती है और केन्द्रीय अधिसूचना के बाद भारत सरकार के अधिपत्य में है अतः किसी अन्य को कब्जा या उपयोग का अधिकार नहीं है। संस्कृति विभाग में नक्षा आदि संरक्षित है। मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा १८ मई २०१० को स्थगन किसी भी प्रकार के निर्माण व जैन तीर्थ को क्षति/कब्जा आदि करने पर 'स्टे आर्डर' जारी किया गया।.....फिर भी जबरन स्कूल के नाम पर किले की समस्त जमीन पर अवैधानिक कब्जा करते जाना जारी है.... और पुरातत्व विभाग मौन साक्षी बना हुआ है कारण कि अदालती आदेश का क्रियान्वयन तो स्थानीय पुलिस /प्रशासन को करना हैं। 'जब सैंया भय कोतवाल तो डर काहे का ?; लोकतंत्र में लोक की यह कारुणिक कथा व्यथा किससे कहें ? कोई है कुछ सुनने या करने वाला?

हमारे नये सदस्य

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी महापरिवार में हम हृदय की गहराईयों से आप सभी का स्वागत करते हैं, अभिनंदन करते हैं।

आजीवन सदस्य

श्री सुमित सुभाष गंगवाल
पैठण (महा.)

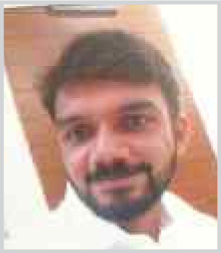
श्री स्वदेश राजेन्द्र पांडे
पैठण (महा.)

श्री अभिजित जयकुमार काला
पैठण(महा.)

श्री अमित अभयकुमार जैन
सुसगांव, पुणे (महा.)

श्री गजेन्द्रकुमार सेठमल जैन
कुनकुरी (छ.ग.)

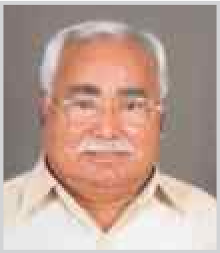
श्री रतनलाल बिशनलाल जैन
कुनकुरी (छ.ग.)

श्री अजित झुम्बरलालजी काला
गेवराई, बीड (महा.)

श्री पंकज भगवानदासजी काला
गेवराई, बीड (महा.)

श्री भानुकुमार कपुरचंद छाबडा
जयपुर (राज.)

श्री विपिन अशोक काला
जयपुर (राज.)

श्री मानक इंदरलालजी काला
जयपुर (राज.)

श्री सुमतकुमार फुलचंदजी जैन
जयपुर (राज.)

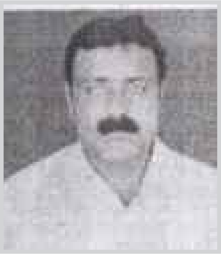
श्री नरेश कन्हैयालाल कासलीवाल
झोटवाडा (राज.)

श्री सुबोधकुमार नानुलालजी चांदवड
जयपुर (राज.)

श्री महेश गेन्धीलालजी काला
जयपुर (राज.)

श्री नवीनकुमार सागरमल सरावगी
जयपुर (राज.)

श्री विरेन्द्रकुमार मानकचंद गंगवाल
जयपुर (राज.)

श्री अनिल शिखरचंद छाबडा (जैन)
जयपुर (राज.)

श्री नवीनकुमार ललितकुमार जैन
जयपुर (राज.)

श्री जितेन्द्रकुमार रमेशकुमार जैन
जयपुर (राज.)

डॉ. पदमचंद जैन
जयपुर (राज.)

श्री सुशीलकुमार जैन
जयपुर (राज.)

श्री सुनिल भवरलालजी जैन
जयपुर (राज.)

श्री सुखानंद मिलापचंद जैन
जयपुर (राज.)

श्री अजयकुमार कैलाशचंद जैन (बड़जात्या)
जयपुर (राज.)

RNI-MAHBIL/2010/33592
Published on 1st of every month
License to post without prepayment -
WPP No. MR/Tech/WPP-90/South/ 2022-24
Jain Tirth vandana, English-Hindi April 2022
Posted at Mumbai Patrika Channel, Mumbai GPO Sorting Office
Mumbai-400001, Regd. No. MCS/160/ 2022-24
Posted on 16th and 17th of every month

With Compliments

From:

GFL

GUJARAT FLUOROCHEMICALS LTD.

(Company of Siddho Mal-Inox Group)

INOX

GROUP OF COMPANIES

Corporate office :
INOX Towers, 17, Sector 16-A,
NOIDA - 201 301 (U.P.)
Tel: 0120-614 9600
Email : contact@gfl.co.in

New Delhi Office :
612-618, Narain Manzil, 6th Floor,
Barakhamba Road,
New Delhi - 110 001
Tel: +91-11-23327860
Email : siddhomal@vsnl.net

Printed and Published by UMANATH RAMAJOR DUBEY on behalf of BHARATVARSHIYA DIGAMBER JAIN TIRTHKSHETRA COMMITTEE, Printed at TRIMURTI PRINTERS, 5/7 DADARKAR BUILDING, V P ROAD, C P TANK, MUMBAI-400 004 and Published from BHARATVARSHIYA DIGAMBER JAIN TIRTHKSHETRA COMMITTEE, HIRA BAUG, 2ND FLOOR, C P TANK, MUMBAI-400 004. Editor : UMANATH RAMAJOR DUBEY